चन्दामामा
माँ-बच्चों का मासिक पत्र

Photo by P. R. Shinde

पुरस्कृत
परिचयोक्ति

'दिल गम को खा रहा है,
गम दिल को खा रहा है!'

प्रेषक :
श्री हंसराज भास्कर, बम्बई

चन्दामामा

विषय-सूची

आधुनिक भारतवर्ष के
निर्माण के लिए

नौजवानों की बड़ी आवश्यकता है। अगर ऐसी माताओं की भी आवश्यकता हो, जो ऐसे नौजवानों को उत्पन्न कर सकें, तो महिलाओं के सेवन के लिये है :

लोधा

गर्भाशय के रोगों का नाशक।
केसरी कुटीरम् लिमिटेड
१५, वेस्टकाट रोड, रायपेट,
मद्रास-१४.

केसरि कुटीरम् लि • मद्रास.14

प्रेसीडेन्ट

टाइलेट टेबुल की
एक सम्पत्ति:

प्रेसीडेंट वेजीटेबुल हेयर आइल अच्छे केशों की वृद्धि करता है।

प्रेसीडेंट स्नो रमणीयतापूर्ण सौन्दर्य प्रदान करता है।

प्रेसीडेंट टाल्कम पाउडर के उपयोग से रंगरूप आकर्षणीय बन जाता है।

RATHOD TRADING CO • SOWCARPET • MADRAS 1
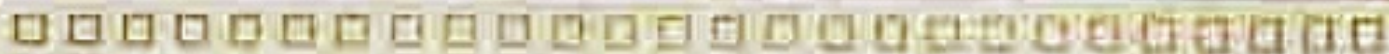
शान से चल रहा है !
ए.वी.एम का
भाई-भाई
(सुख-दुख के बीच झूलता
कौटुंबिक चित्र)
AVM
PRODUCTIONS
एम. वी. रामन
राजेन्द्रकृष्ण
मदनमोहन

चन्दामामा

संपादक : चक्रपाणी

अब शिक्षणालयों में ग्रीष्मावकाश प्रारम्भ होगा। कई राज्यों में परीक्षाओं के परिणाम भी निकल चुके होंगे। पाठकों में से कई प्रसन्न होंगे और कई दुःखी।

जो प्रसन्न हैं, उनसे हम यह कहना चाहेंगे कि ग्रीष्मावकाश में वे अपने भविष्य के बारे में चिन्तन करने की कोशिश करें। उन्हें नये नये विषयों को जानने में दिलचस्पी दिखानी चाहिये। घूम-फिरकर, ऐतिहासिक प्रदेशों का भ्रमण भी करना चाहिए।

और जो दुःखी हैं उनके लिये हमारा नारा है, "प्रयत्न करो, पुनः प्रयत्न करो"। जीवन के उतार-चढ़ाव में प्रयत्न ही विश्वसनीय साथी है।

मई
१९५६

वर्ष : ७
अंक : ९

मुख - चित्र

दुर्योधन पाण्डवों को अपना वैभव दिखाकर उनको चिढ़ाना चाहता था। पर वह चित्रसेन नाम के गन्धर्व द्वारा पकड़ा गया और पाण्डवों ने आखिर उसे छुड़ाया।

दुर्योधन, कर्ण, शकुनि, दुश्शासन, और अपनी विशाल सेना के साथ वापिस हस्तिनापुर के लिए रवाना हो गया। अन्धेरा होने पर उन्होंने एक जलाशय के किनारे तम्बू गड़वाये। तब दुर्योधन के तम्बू में कर्ण ने आकर कहा— "महाराज! आप थे, इसलिये चित्रसेन को जीत आये, हम होते तो जरूर हार जाते।"

दुर्योधन तो थोड़ी बहुत दुःखी था। कर्ण के संकेत ने उसके घाव पर नमक का काम किया। दुर्योधन आँसू बहाते हुए कहने लगा—"क्या इतना अपमानित होने पर मैं ज़िन्दा रहूँगा! मैं अभी उपवास शुरू करता हूँ।" वह अपने शस्त्र, आभूषण, वस्त्र उतारकर दर्भासन पर लेट गया।

"महाराज! इसमें अपमान की क्या बात है! पाण्डव आपके नौकर हैं और नौकरों का ही काम उन्होंने किया है। इसमें उनका बड़प्पन क्या है!" कर्ण ने दुर्योधन को समझाया, पर कोई फ़ायदा न हुआ। फिर दुश्शासन और शकुनि ने आकर समझाया; पर दुर्योधन न माना। वह उपवास कर मर जाना चाहता था। दुर्योधन ने दुश्शासन से कहा—"भाई! तुम सेना लेकर हस्तिनापुर चले जाओ। कर्ण और शकुनि को मन्त्री बनाकर राजपाट करो।"

पाताल के राक्षसों को भी पता चला गया कि दुर्योधन ने उपवास शुरू कर दिया है। तुरन्त उन्होंने होम करके मन्त्र-पाठ किया। जब अग्नि में से कृत्य नाम की शक्ति निकली तो राक्षसों ने कहा—"तुम जाकर तुरत उपवास करनेवाले दुर्योधन को यहाँ ले आओ।" कृत्य ने वैसा ही किया।

"एक महायुद्ध होनेवाला है। उसमें देवता पाण्डवों का साथ देंगे, और हम तुम्हारे साथ होंगे—इसलिये तुम्हें मरना नहीं चाहिये।" राक्षसों ने दुर्योधन को उपदेश दिया। सवेरे होते होते कृत्य दुर्योधन को अपने स्थान पर छोड़ आई।

दक्षिण में था किसी समय
'महिलारोप्य' नगर सुख्यात,
था वाणिज्य वहाँ का उन्नत
चहल-पहल रहती दिन-रात।

वहाँ प्रतापी राजा था जो
'अमरशक्ति' था उसका नाम,
ध्यान प्रजा के ही सुख-दुख का
रखता था वह आठों याम।

राजकोष था धन से पूरा
रत्नों की थी राशि अपार,
हृदय खोल देता वह सबको
आते जो याचक बन द्वार।

किंतु सताती रहती उसको
मन में हर दम चिंता एक—
तीन-तीन यद्यपि बेटे हैं
किंतु न उनमें कोई नेक!

था 'बहुशक्ति' प्रथम सुत औ'
'उग्रशक्ति' दूसरे का था नाम,
'अनन्तशक्ति' था सबसे छोटा
नाम बड़े तो थोड़े काम।

तीनों ही थे महामूर्ख औ'
दुर्विनीत, पूरे हैवान,
बहुत सताते दुर्बल जन को
नहीं बड़ों का करते मान।

'भारतभक्त'

राजा ने निज मंत्रीगण को
एक दिवस बुलवाया आखिर,
पूछा उनसे—" सोच बतायें,
कुछ भी तो करना है आखिर।

पाँच-पाँच सौ वेतन-भोगी
शिक्षक हैं यद्यपि तैयार,
किंतु राज-पुत्रों के शिक्षण
का न सकेंगे ले वे भार।"

पुत्रों की शिक्षा की चिंता
से राजा को चिंतित देख,
कहा 'सुमति' नामक मंत्री ने—
" सुनें, राय मेरी है एक;

आचार्य विष्णुशर्माजी हैं
सकल शास्त्रपारंगत एक,
वे ही राजकुमारों को अब
दे सकते हैं शिक्षा नेक।"
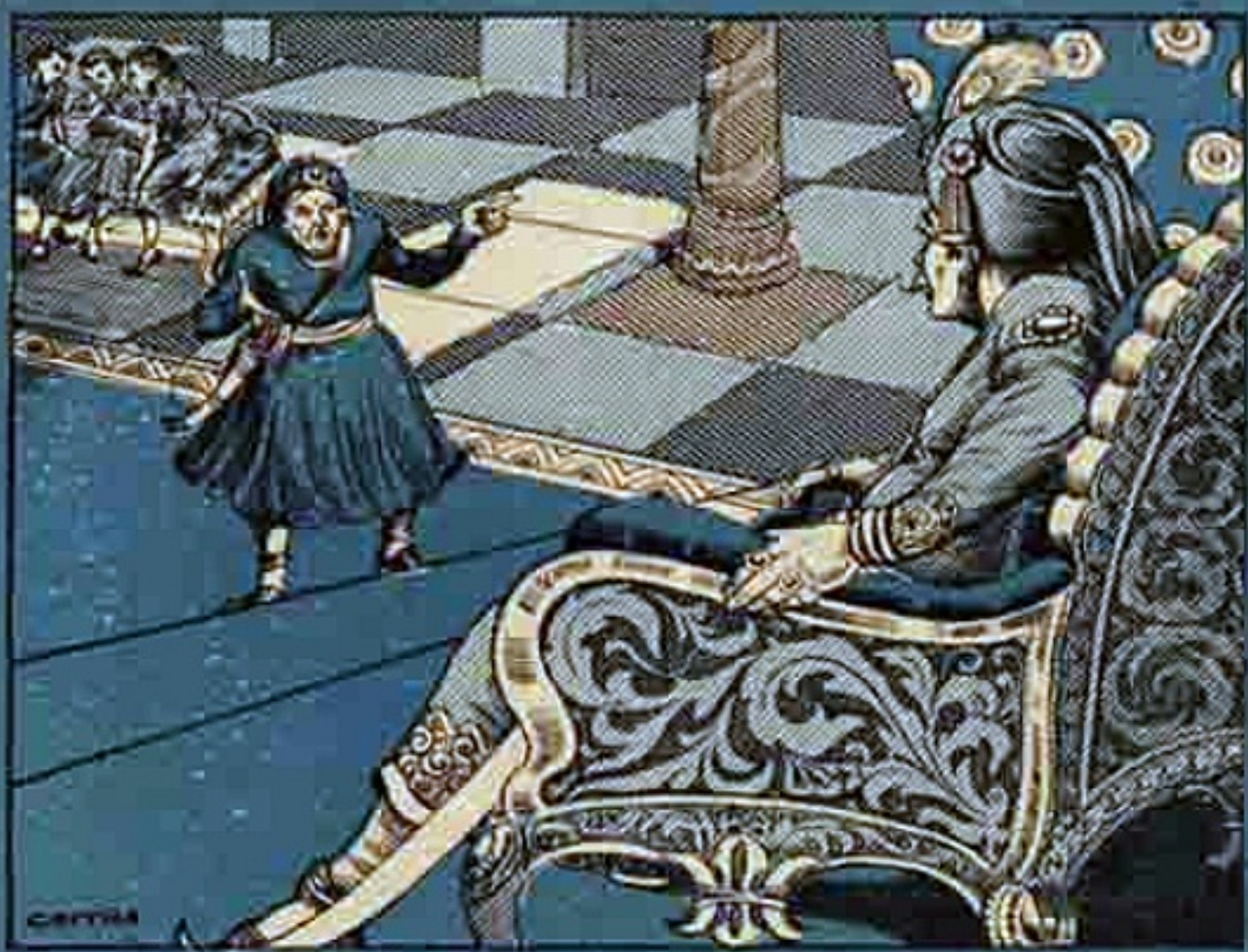
बुला विष्णुशर्मा को तत्क्षण
राजा ने आदर के साथ,
कहा—"सौंपता निज पुत्रों को
द्विजवर, आज आपके हाथ ।

निपुण नीति में इन्हें बनाना
अब से रहा आपका काम,
योग्य अगर ये बन पाये तो
दूंगा मैं सौ गाँव इनाम !"

हँसकर कहा विष्णुशर्मा ने—
"करें आपका मंगल राम,
मैं न बेचता विद्या अपनी
नहीं चाहिए मुझे इनाम ।

आदरसहित बुलाकर मुझको
दिया आपने है आदेश,
कर्तव्य उसे ही मान करूंगा
तन मन से अब हे राजेश !
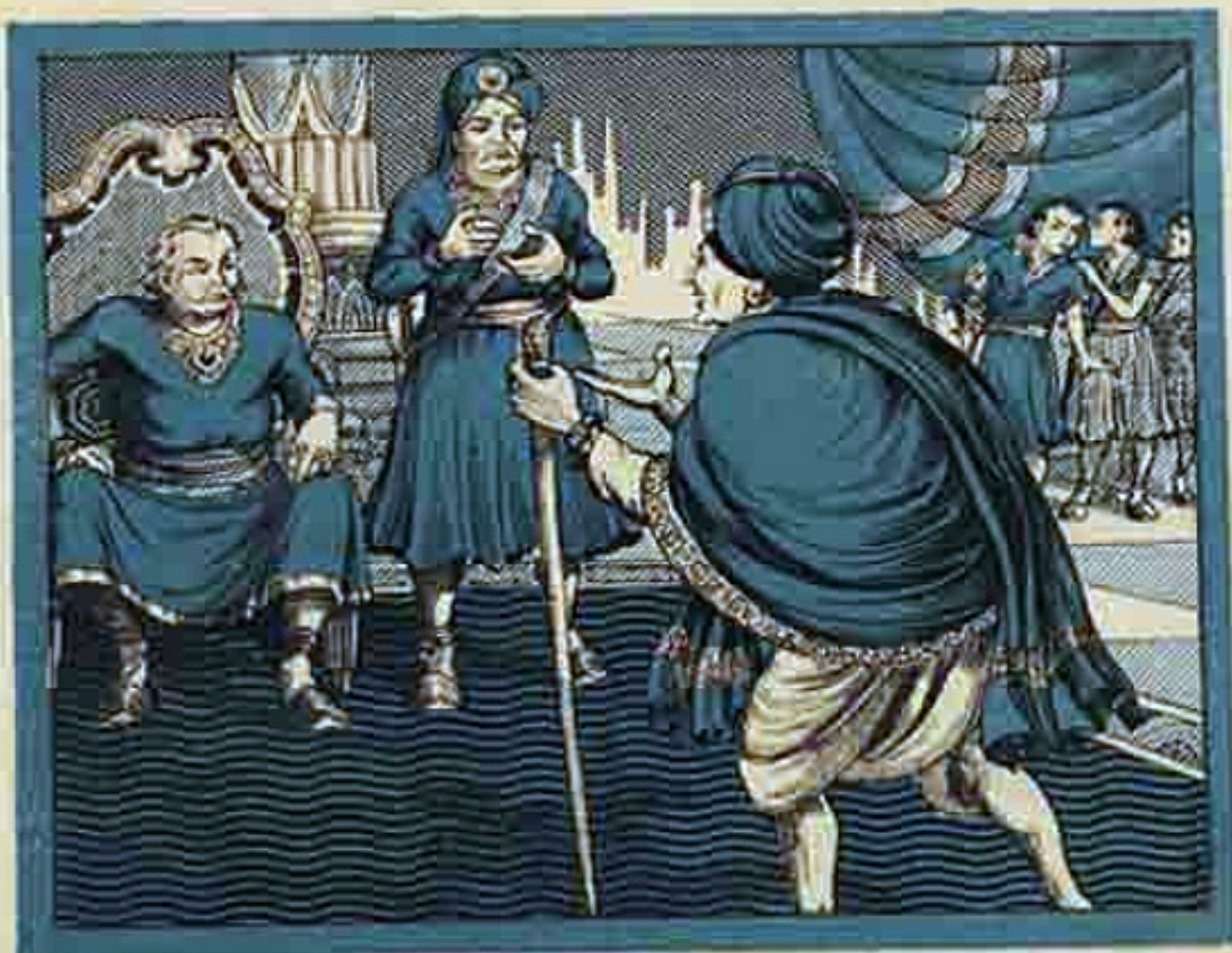
नीतिज्ञ बनाना छः मासों में
रहा आज से मेरा काम,
सफल अगर मैं हुआ न इसमें
तो बदलूँगा अपना नाम।''

आश्वासन पा पंडितवर से
जगा नृपति-मन हर्ष अपार,
चिंतामुक्त हुआ दे उनपर
पुत्रों के शिक्षण का भार।

रचीं विष्णुशर्मा ने फिर तो
सुनीति कथाएँ सविस्तार,
और उन्हीं को सुनकर क्रमशः
शिक्षित होने लगे कुमार।

लोकनीति, व्यवहारनीति की
सारी ही बातें यों जान,
महामूर्ख ही छः मासों में
बने नीति में निपुण सुजान।

राजा ने तब पंडितवर का
किया अतुल आदर-सम्मान,
अमर हो गये कथासहित वे
गूँजा यश का अक्षय गान।

उन्हीं कथाओं के संग्रह को
'पंचतंत्र' कहते हैं आज,
सुनता जो भी उन्हें ध्यान से
सजता उसका मंगल साज!

हैदराबाद रियासत में कोई किसान रहा करता था। उसका विवाह हुआ। पत्नी गृहस्थी चलाने भी आगई थी। परन्तु किसान अपनी पत्नी से बात न करता था। पत्नी कई दिन इस इन्तज़ार में रही कि पति की नाराज़गी कभी न कभी तो दूर होगी। परन्तु पति की नाराज़गी न गई।

आखिर उसने अपनी हालत घर के पुरोहित को सुनाई। उसने थोड़ी देर सोचकर कहा—"इस बार जब आपके पति बाहर जाने लगेंगे, तब आप मुख में सुपारी रख, हाथ में पान ले, दरवाज़े को रोककर खड़े हो जाना और कहना कि अगर चूना दोगे तो हट जाऊँगी। मुझे बताना कि तब वे क्या कहते हैं।"

पत्नी सुपारी मुख में रख, हाथ में पान ले, दरवाज़े को रोक कर खड़ी हो गई। बाहर जाने के लिए पति आया। "रास्ता छोड़ो" उसने कहा। "थोड़ा चूना दीजिये, तभी जाऊँगी।"—पत्नी ने कहा।

"पत्थर में अच्छी धान की फ़सल लगनी चाहिये, सोने की हँसिया से फ़सल काटनी है। घी की चप्पल ढोनी हैं। लाल तालाब का पानी पीना है। तभी मैं तुम्हें चूना दे सकूँगा।" कहता कहता पति, उसको अलग धक्का देकर चला गया।

पत्नी ने पुरोहित को यह सब सुनाया।

"आपके पास तो पथरीली ज़मीन है ही। उस पर मट्टी डलवाइये। धान की फ़सल बड़ी होने पर सोने की हँसिया से कटवाइये। फिर देखा जायगा"—पुरोहित ने कहा।

पत्नी ने किसानों को बुलवाकर पथरीली ज़मीन पर धान बोने के लिए कहा। किसानों ने वैसा ही किया। फ़सल कटवाने

श्री अनुपम परदेशी

के लिए दो सोने की हँसिये तैयार करवायीं। फिर पुरोहित को बुलाकर पूछा तो उसने कोई सलाह दी। अगले दिन पत्नी आदमी का वेश धर, एक घोड़े पर सवार हो, चार नौकरों के साथ, खेत में गई।

"किसके हुक्म पर यहाँ खेती हो रही है? बताओ। हज़ार रुपये जुर्माना देना होगा।"—पत्नी ने कुलियों से कहा।

तुरंत उसके पति के पास खबर भेजी गई। वह आया। पत्नी ने उससे कहा—"हम नवाब के कर्मचारी हैं। किसने आपको इस ज़मीन पर खेती करने की इज़ाजत दी है? चलिये। दफ़्तर चलें।"

पति पत्नी के पीछे पीछे पैदल चला। पत्नी घोड़े पर सवार थी। उसने अपनी एक एक चप्पल नीचे छोड़ दी। उसे खुश करने के लिए पति, खुद चप्पल लेकर, घोड़े के पीछे पीछे भागा। काफ़ी दूर तक उसका पति, धूप में भागा था, इसलिये उसे प्यास लगने लगी। उसने लाल तालाब में पानी पीने के लिये पत्नी की इजाज़त माँगी।

"तुम घर जाओ। इस बार तुम माफ़ किये जाते हो।" कहती कहती पत्नी किसी दूसरे रास्ते से घर पहुँच गई।

काफ़ी देर बाद पति घर पहुँचा। वे खा-पीकर जब बाहर आ रहे थे, तो मुख में सुपारी डाल, हाथ में पान ले, पत्नी दरवाज़े को रोकते हुए खड़ी हो गई।

"रास्ता छोड़ो।"—पति ने कहा।

"पत्थर पर धान बोया गया। सोने के हँसियों से फ़सल काटी गई। आपने अपनी स्त्री की चप्पलें ढोईं। लाल तालाब का पानी भी पिया है। अब तो चूना देकर ही जाइये। कोई बात नहीं।"—पत्नी ने कहा।

पति सब ताड़ गया। उस दिन से वह पत्नी से अच्छी तरह बातचीत करने लगा।

[१०]

[जब शिवदत्त को यह मालूम हुआ कि समरसेन युद्ध भूमि में घायल हो मर गया था, वह अपने साथियों को लेकर जंगल में भाग गया था न! जंगल में, एक जंगली जाति के मुखिया ने उसका आतिथ्य किया। उसी दिन रात को शत्रुओं ने उनके गाँव पर हमला किया। उनमें से एक ने सुबाहु नामक, नरवाहन के अनुचर के बारे में बताया। बाद में—]

"मन्दर देव! उस शत्रु सैनिक की बातों ने मुझे और जंगलियों के सरदार को अचरज में डाल दिया। मुझे शक होने लगा कि घटनाओं का क्रम कुछ बदल रहा था।"—शिवदत्त ने कहा।

मन्दर देव ने सिर नीचे करके कहा—"आपका यह नया अनुभव सुन मुझे रोमांच हो रहा है। बताइये, आगे क्या हुआ!" मन्दर देव ने आतुरता दिखाते हुए पूछा।

"वह जंगलियों का सरदार भी मेरी तरह आनेवाले खतरे के बारे में शंकित प्रतीत होता था। उसने मेरी तरफ मुड़कर कहा—"मालूम होता है कि इस जंगल में भी, जहाँ हमें न किसी से वास्ता था, न हम से ही किसी को कोई सम्बन्ध था, अब आप लोगों की गड़बड़ी, खलबली, पहुँच रही है। इस सुबाहु ने, जिसके बारे में यह सैनिक कह रहा है, भले ही नरवाहन की मदद की हो, पर उसको इस

तरह हमारे गाँवों को तहस-नहस करने का और यहाँ की शान्ति भंग करने का कोई अधिकार नहीं है। ऐसा मुझे लगता है।" वह गुस्से में दाँत कटकटाने लगा।

"आजकल जिसकी लाठी उसकी भैंस। अगर तुम सब जंगली लोग मिलकर मुकाबला कर सको, तब कुछ फ़ायदा हो सकता है। उसके लिए जो कुछ मुझसे बन सकता है, मैं करने के लिए तैयार हूँ।" मैंने कहा।

थोड़ी देर में, उस गाँव में, जो कोई भी हथियार पकड़ सकते थे, वे सब मुखिया के पीछे पीछे, जिस तरफ़ जंगल जल रहा था, उस ओर चल दिये। मैं भी, अपने सैनिकों को लेकर, उनके साथ निकल पड़ा। अगर उन जंगलियों को मालूम हो जाय कि वे किस तरह अपनी शक्ति और स्वतन्त्रता खोने जा रहे थे, तो मैं उनकी मदद से दुश्मन से टक्कर लोहा ले सकता हूँ—यह ख्याल मेरे मन में उठने लगा।

हम थोड़ी दूर ही गये थे कि तलवार, कटार आदि लेकर, नरवाहन के अनेक सैनिक, एक जंगलियों के ग्राम में संहार का ताण्डव-नृत्य कर रहे थे। जो कुछ मिलता, वे नाश कर देते। और जब कभी कोई जंगली पकड़ा जाता, तो उसके हाथ बाँधकर, वे आगे ले जाते। उनको वे शायद शहरों में, गुलाम के तौर पर बेचना चाहते थे।

इस बीच में, जंगली सरदार के सैनिक, यकायक नरवाहन के सैनिकों पर शोर करते हुए कूद पड़े। नरवाहन के सैनिक इस भरोसे में थे कि यहाँ उनका मुक़ाबला करने वाला ही कोई न था, इसलिये उन्होंने जब इन जंगलियों को लड़ते देखा तो वे इधर उधर तितर-बितर होने लगे। जंगली अपने भालों से नरवाहन के सैनिकों को

भोंकने लगे। उन्होंने अपने साथियों को भी, जो बाँध दिये गये थे, खोल दिया। वे सब मिलकर जय जयकार करने लगे। सारा वातावरण गूँजता हुआ सा लगा।

इस लड़ाई में मुझे अपने सैनिकों के साथ भाग लेने का मौका न मिला। जंगलियों की बहादुरी देखकर मैं चकित था। मुझे ऐसा लगा कि इनको यदि कुछ सिखा दिया गया तो इनकी सहायता से, कुण्डलिनी द्वीप को, नरवाहन के दुष्ट प्रभाव से मुक्त किया जा सकता है।

"क्या जंगल की जलती आग को योंही छोड़ दोगे? छोड़ दोगे तो आग धीमे धीमे सारी जगह फैल जायेगी। कुछ तो करना ही चाहिए।"—मैंने जंगलियों के सरदार से कहा।

उसने जलते जंगल की ओर एक बार देखकर कहा—"उस आग को बुझाना, आदमी के बस की बात नहीं है। आग लगाना ज़रूर आसान है। मगर बुझाना नहीं। खैर, अब यह बताइये—आपका यह राजा, हमारे जंगली प्रदेश को क्यों किसी को दे रहा है? अगर हम सब जंगली उसका मुक़ाबला करने लग जायें

तो वह क्या हमारे सर्वनाश के लिए तैयार हो जायेगा?"—सरदार ने पूछा।

मैं इन प्रश्नों की ही बहुत देर से प्रतीक्षा कर रहा था। मैंने उसको नरवाहन की कुटिल राजनीति और उस राजनीति को सफल बनाने में मदद देनेवाले द्रोहियों के बारे में बताया। "अगर वह उनको, जिन्होंने उसकी मदद की है, इस तरह जागीरें न दे, तो वे सब मिलकर उसको मार देंगे। इसलिये उसे इस तरह करना ही पड़ेगा। अगर तुम उसके चुंगल से बचना चाहते हो, तो तुम सब को

मिलकर उसका मुकाबला करना होगा। दूसरा और कोई रास्ता नहीं है। मेरी यही राय है।"—मैंने कहा।

ये बातें सुन, पांच छः मिनट तक जंगलियों का सरदार कुछ सोचता खड़ा रहा। फिर उसने जंगलियों को सम्बोधित करके कहा—"तुम्हें यह बात सब जगह पहुँचानी होगी! कल ठीक दुपहर को, भेड़िया गाँव में, जाति के सब बड़े मुखिये, अपने अपने साथियों को लेकर एकत्रित हों।" उसने यह आज्ञा बहुत ऊँचे स्वर में दी।

तुरत, भयंकर शब्द करते हुए, सशस्त्र जंगली युवक, जंगल में चारों ओर भागने लगे। मैं भी अपने साथियों को लेकर, जंगलियों के सरदार के साथ साथ, भेड़िया गाँव की ओर चल पड़ा।

सवेरे होते होते, हम भेड़िया गाँव पहुँचे। जब आसपास इतने गाँव थे, तब सरदार ने यह गाँव ही क्यों चुना, मुझे सहसा, गाँव को देखकर भलीभाँति मालूम हुआ।

यह गाँव दूसरे जंगली गाँव की तरह न था। गाँव के चारों ओर, ऊँची मिट्टी की

चारदीवारी थी। कहीं कहीं छोटे बुरज भी थे। गाँव के बड़े बड़े पेड़ों पर मचान भी बने हुए थे। वहाँ से बाण छोड़े जा सकते थे। गाँव के बीच में एक बड़ा सागून का पेड़ था। उस पर चढ़कर, चार पाँच मील की दूरी पर क्या क्या हो रहा था, सब आसानी से देखा जा सकता था।

ज्यों ज्यों समय होता जाता था, जाति के बड़े बूढ़े, बुजुर्ग, त्यों त्यों अपने अनुयायियों को लेकर वहाँ इकट्ठे होते जाते थे। इन लोगों में वृद्ध भी थे, और नवयुवक भी। पर सभी के पास हथियार थे। सभी के चेहरों पर भय, उत्कंठा, और आश्चर्य अंकित मालूम होते थे।

ठीक दुपहर को, एकत्रित लोगों में तालियाँ बजने लगीं। यह सभा के प्रारम्भ की सूचना थी। एक बड़े बड़ के पेड़ के नीचे सिंह और मृग चर्म बिछा दिये गये थे। जाति के बड़े बुजुर्ग एक एक करके उन पर बैठने लगे। मेरे साथ आये हुए सरदार को पेड़ के पास एक उन्नत आसन दिया गया। मुझे और मेरे अनुचरों को, उसके पीछे, कुछ नीचे बिठाया गया। उपस्थित लोगों में, तरह तरह के फल,

मांस, मदिरा बाँटे गये। सबके खाने के बाद, वृद्ध सरदार ने, वहाँ सब के बुलाये आने का कारण स्पष्ट शब्दों में बताया। "परिस्थितियाँ एक दम बदल गयी हैं। कुण्डलिनी द्वीप में कई राजा आये, और कई गये, पर किसी ने भी हमारे प्रदेश में कोई दखल न दिया। हम इस वन-सम्पदा के भरोसे सुख से जीते रहे। पर अब दशा बदल रही है। अब हमारे यहाँ भी गड़बड़ी होने लगी है। पिछली रात को जो भयंकर घटना हुई, आप में से कइयों ने देखा ही होगा।"—वृद्ध ने अपना भाषण यों समाप्त किया। तब सभा में एकत्रित अन्य मुखियों ने अपने अपने विचार प्रकट किये। उनकी बातें सुनकर मुझे ऐसा लगा, मानो नरवाहन ने यह सारा प्रदेश, अपने सहायकों में बाँट दिया हो।

"अब क्या करना होगा!" यह प्रश्न वहाँ उपस्थित मुखियों को सता रहा था। कुछ न कुछ करना होगा, पर क्या करना होगा, उनमें से कोई न जान पाते थे। "यह जंगल हमारा है, इस पर हमारा अधिकार है" कई भाषणों की यह टेक थी। यह सुनने के बाद वृद्ध सरदार ने सीधा प्रश्न पूछा—"अच्छा तो उन अधिकारों को कैसे सुरक्षित रखा जाय!"

यह प्रश्न सुनते ही उपस्थित लोग एक दूसरे का मुँह ताकने लगे। थोड़ी देर खामोशी रही। फिर एक नौजवान ने उठकर कहा—"वे हमें जोर-जबरदस्ती से झुकाना चाहते हैं। इसलिये हमें भी, अपनी शक्ति से, भर सक उनका मुकाबला करना होगा।"

"हाँ हाँ" स्वीकृति रूप में, सभी ओर से "हाँ हाँ" का शब्द प्रतिध्वनित होने लगा। वृद्ध सरदार शायद इसी क्षण की

पतीक्षा कर रहा था। उसने सिर हिलाते हुए कहा—"तब अच्छा होगा कि जात के मुखिये अपने अनुचरों को तुरंत इकट्ठा कर ले। हमें दुश्मन को यह मौका न देना चाहिये कि वह एक एक करके हमारे गाँव का नाश करे। हमें भी शत्रु का मुकाबला करना चाहिये—जीत हो या हार, पर यह बात तय कर लेनी होगी।"

उपस्थित मुखियों को उसकी बात जँची। उन्होंने उसकी बात को स्वीकृत करते हुए तालियाँ बजाईं। तब वृद्ध ने कहा—"आप सब की अनुमति से मैं पहिले एक काम करना चाहता हूँ। मैं इस बीच में, नरवाहन के पास, जिसने अब कुण्डलिनी द्वीप पर कब्जा कर लिया है, खबर भिजवा दूँगा कि उसका इस इलाके में सैनिकों का भेजना अच्छा नहीं है। देखें, वह क्या कहता है।"

इस विषय में भी स्वीकृति की सूचना देते हुए, सब ने सिर हिलाये। इस तरह वह सभा समाप्त हुई। यह निर्णय हुआ कि अगले दिन शाम तक, जाति के बड़े बुजुर्ग, अपने अपने साथियों को लेकर, भेड़िया गाँव में इकट्ठे हों। यह भी निश्चय किया गया कि स्त्री, वृद्ध, बच्चों को, जंगल के अन्दर सुरक्षित जगह पर पहुँचा दिया जाय।

सब के चले जाने पर वृद्ध ने मुझे बुलाकर पूछा—"आपकी क्या राय है? आपने इन बुजुर्गों को तो देख ही लिया है। क्या वे सैनिकों का मुकाबला कर सकेंगे?"

"यह अभी नहीं कहा जा सकता। नरवाहन के सैनिक खूब सीखे-सधे हैं। अलावा इसके, उनके पास घोड़े भी हैं। बिजली की तरह हमला कर वे शायद हो सकते हैं। आप लोगों के पास सिवाय पदातियों

के और कोई नहीं है। युद्ध में सिर्फ़ शक्ति, साहस ही काफ़ी नहीं है। क्या आप अश्व-सेना तैयार कर सकेंगे?" मैंने पूछा।

वृद्ध ने कहा—"यह फ़िलहाल तो सम्भव नहीं है। अभी अभी ही हमारे नौजवान, जंगली घोड़ों को पकड़कर उन्हें सिखाकर, बिना ज़ीन, लगाम के, उन पर सवारी कर रहे हैं। ज़ीन बनाने के लिए हमारे पास कारीगर नहीं हैं। पर अश्व-सेना तैयार करनी ही होगी।"—वृद्ध ने कहा।

"ज़रूर! तैयार कीजिये। उसकी बहुत ज़रूरत होगी।"—मैंने सलाह दी। तब वृद्ध ने एक चमड़े पर, तेज़ चाकू से कुछ लिखकर, एक युवक को बुलाकर कहा—"इसे नरवाहन राजा के पास पहुँचाओ। तू निर्भय हो, जंगल से मैदान की ओर जा। जिस किसी सैनिक को यह तू दिखायेगा, वह तुझे राजा के पास ले जायेगा। पर तुझे निश्शस्त्र रहना होगा।"

उस सन्देश का क्या फल होगा, यह जानने के लिए मैं उत्सुक हो उठा। उसने क्या लिखा था, मैंने न पूछा। पर मैं इतना ताड़ गया कि वृद्ध को भी बहुत विश्वास न था कि इससे कोई लाभ होगा।

उस रात को, हमने भेड़िया गाँव में ही आराम किया। रात भर, हम जलते जंगल देखते रहे और लोगों के चीत्कार भी हम सुनते रहे। हम बहुत सवेरे उठे, पर तब तक, वृद्ध और कई बुज़ुर्ग सागून के पेड़ के नीचे मौजूद थे। मेरे वहाँ पहुँचते ही मचान पर से एक व्यक्ति चिल्लाया—"देखो, हमारा आदमी आ रहा है। पर यह क्या! वह गदहे पर बैठा हुआ है।"—उसने आश्चर्य प्रकट किया।

(अभी और है)

धर्म - पालन

ब्रह्मदत्त जब काशी का परिपालन कर रहा था, तो बोधिसत्व इन्द्रप्रस्थ नगर में, धनंजय नाम के कुरु राजा के रूप में पैदा हुए। उनके राज्य में, न अतिवृष्टि थी, न अनावृष्टि ही। प्रजा सर्व-सम्पन्न सुखी थी। धर्म के आचरण में, दान-धर्म में, धनंजय का मुकाबला कोई न कर सकता था। यह ख्याति सारे जम्बू द्वीप में फैली हुई थी।

उन्हीं दिनों, कलिंग देश का राजा कालिंग था। उसकी राजधानी दन्तपुर थी। वहाँ अनावृष्टि के कारण एक साल अकाल पड़ा। प्रजा भूख के मारे तड़पने लगी। कई बच्चे माँ की गोदों में ही मर गये। सब के सब दाने दाने को मुहताज हो गये। जनता में हाहाकार मचा।

यह विषम परिस्थिति देख, कालिंग ने अपने मन्त्रियों से विचार-विनिमय किया। "इस वर्ष हमारे देश इतने भयंकर अकाल के आने का क्या कारण है! अकाल का निवारण करने के लिए हमें क्या करना चाहिये?"—राजा ने पूछा।

"महाराज! जब धर्म का पालन नहीं होता, तब ऐसी विपत्ति देश पर आती है।"

"इन्द्रप्रस्थ के राजा धनंजय अपने धर्म का अच्छी तरह पालन कर रहे हैं। इसलिये उस देश में नियमितरूप से महीने में तीन बार वर्षा होती है। कभी दुर्भिक्ष नहीं होता। कभी किसी चीज़ की तंगी नहीं पड़ती।"—मन्त्रियों ने निवेदन किया।

"यदि यही बात है तो तुम तुरंत इन्द्रप्रस्थ जाओ। धनंजय राजा के दर्शन करो और उनसे सुवर्ण पत्रों पर धर्म के मूल-भूत सिद्धान्तों को लिखवा लो। हम भी उनका

आचरण करेंगे, ताकि देश में फिर कभी अनावृष्टि न हो।"—कलिंग राजा ने कहा।

राजा के कथनानुसार, कलिंग देश के मन्त्री, कुछ सुवर्ण पत्रों को लेकर, इन्द्रप्रस्थ पहुँचे। वहाँ राजा धनंजय का दर्शन प्राप्त कर उन्होंने कहा—

"महाराज! हम कलिंग देश से आ रहे हैं। हमारे देश की प्रजा भयंकर अकाल से ग्रस्त है। प्रजा में हाहाकार मचा हुआ है। क्योंकि आप स्वयं धर्म का पालन करते हैं, इसलिये आपकी प्रजा कष्टों से अपरिचित है। हमारे राजा को किन धार्मिक सिद्धान्तों का पालन करना चाहिये, यदि आप इन सुवर्ण पत्रों पर लिख दें, तो हम उन्हें लेकर वापिस चले जायेंगे और हमारे राजा को दिखायेंगे। हमारे राजा भी उनका पालन करेंगे, और प्रजा को इन कष्टों से मुक्त करेंगे।"

यह कहते हुए कलिंग के मन्त्रियों ने सुवर्ण पत्र राजा धनंजय के सामने रख दिये।

धनंजय ने उन्हें यथोचित आसन पर बिठाकर इस प्रकार कहा—"महामन्त्रिगण! मुझे क्षमा कीजिये। मैं इन पत्रों पर धर्म के सिद्धान्तों के लिखने के योग्य नहीं हूँ।"

"एक समय था, जब मैंने स्वयं अधर्म किया था। हमारे देश में हर तीसरे वर्ष, कार्तिकोत्सव मनाया जाता है। तब राजा को, एक तालाब के किनारे यज्ञ कर, चारों दिशाओं में चार बाण छोड़ने चाहिये। एक बार मेरे छोड़े हुए चारों बाणों में से तीन तो मिल गये, परन्तु चौथा तालाब में गिर गया। अब वह तालाब में गिरा होगा तो उसकी चोट से मछली, मेंढक वगैरह मर गये होंगे। इस तरह मैं धर्म-मार्ग से विचलित हुआ। अतः यदि हमारे राज्य में अकाल नहीं पड़ते हैं, तो इसका

कारण कोई और होगा। आप पता करके देखिये।"

यह सुन मन्त्री आश्चर्य चकित हुए। वे राज-माता मायादेवी के पास गये। उन्होंने उनको सब कुछ कह सुनाया। "कम से कम आप हमारे लिये धर्म के सिद्धान्त लिख दीजिये।"—मन्त्रियों ने कहा।

"मैं भी धर्म-मार्ग से विचलित हो चुकी हूँ। एक बार मेरे ज्येष्ट पुत्र ने मुझे सोने का हार भेंट में दिया। यह सोच कि मेरी बड़ी बहू स्वयं धनवती है, मैंने अपनी छोटी बहू को वह हार दे दिया। पर देने के बाद तुरत मुझे भान हुआ कि मैं दोनों में भेद कर रही हूँ। मैं ग़ल्ती कर रही हूँ। इसलिये मैं किसी दूसरे के लिए धर्म के सिद्धान्त नहीं लिख सकती। मैं लाचार हूँ। किसी और से पूछिये।"—राज-माता ने कहा।

कलिंग मन्त्री राज-भ्राता नंद के पास गये। उन्होंने अपना आशय उसे बताया। उसने कहा कि वह भी एक बार धर्म से विचलित हो चुका था।

"मैं प्रति रात्रि, रथ में सवार हो अन्तःपुर जाता हूँ। कभी कभी वहाँ रात भर ठहर भी जाता हूँ। यदि मैं रथ में कोड़ा छोड़ता, तो इसका मतलब था कि मैं वापिस आ जाऊँगा। अगर मैं कोड़ा साथ ले जाता, तो सारथी रथ ले जाकर, अगले दिन सवेरे लाता। एक बार रथ में ही कोड़ा छोड़कर, अन्तःपुर में गया। मैं वापिस आना चाहता था; परन्तु इस बीच में वर्षा शुरू हो गई। मेरे भाई—राजा ने मुझे आने नहीं दिया। उस रात वहीं ठहर गया। वर्षा में भीगता मेरा सारथी बाहर ही रह गया। उसको इस प्रकार कष्ट देकर मैंने धर्म का पालन नहीं किया है।

मुझे माफ़ कीजिए।"—राज माता ने कहा।

यह सोच कि कम से कम कुरु राजा के मन्त्री उनकी इच्छा पूरी कर सकेगा, कलिंग के मन्त्री उनके पास गये। परन्तु उन्होंने भी मंत्रियों को निराश कर दिया। उन्होंने यों कहा—

"मैं एक दिन किसानों के प्रान्तों में भूमि की पैमाइश के लिए गया। पैमाइश के अनुसार चिन्ह के लिए जहाँ डंडा गाड़ना चाहिये था, वहाँ एक बिल था। मुझे सन्देह हुआ कि उस बिल में कोई प्राणी होगा। परन्तु अगर डंडे को इस तरफ़ गाड़ता हूँ तो किसान को नष्ट होता है; अगर उस तरफ़ गाड़ता हूँ तो राजा को हानि होती है। इसलिए मैंने आज्ञा दी कि बिल में ही डंडा गाड़ा जाना चाहिये। उसी समय एक केंकड़ा बाहर रेंगता हुआ आया, और डंडे की चोट से मर गया। इसलिये मैंने भी धर्म का उलंघन किया है। मैं किसी से किसी विषय में कोई अधिक नहीं हूँ।"—कुरु राजा के मन्त्री ने कहा।

कलिंग देश के मन्त्रियों को एक बात सूझी। उन्होंने जो कुछ सुना था, उसी को सुवर्ण पत्रों पर लिखकर अपने राजा के पास ले जाने की ठानी। आखिर कलिंग के मंत्रियों ने यही किया। धर्म के प्रति श्रद्धा रखना ही उत्तम धर्म है, कालिंग ने उनके अनुभव से जाना। वह भी आत्म विवेचन करता, अपने देश का परिपालन करने लगा। तुरंत वर्षा हुई, अकाल समाप्त हुआ। लोगों में उत्साह आ गया। कलिंग देश की प्रजा तब से सुख से रहने लगी।

वायु - मण्डल

भूमि के बारे में सोचते समय उसके चारों ओर के वायु-मण्डल को नहीं भूलना चाहिये। वस्तुतः वह भी भूमि का एक भाग है। भूमि के साथ हवा भी घूमती है, और सूर्य के चारों ओर प्रदक्षिण करती है।

यह कोई नहीं कह सकता कि हवा की यह परत कितनी दूर तक फैली हुई है। वायुयान अभी आठ मील से अधिक ऊपर नहीं गये हैं। बेलून और उनमें बैठे वैमानिक १४ मील तक जा पाये हैं। हम रात को उल्का-पात जो देखते हैं, कहा जाता है, ये २०० मील दूर हैं। जब भूमि के चारों ओर प्रदक्षिणा करनेवाली चीज़, वायु के वेग के साथ टकराती है तो यह प्रकाश होता है, और हम उसे उल्का-पात कहते हैं। अतः साफ़ है कि २०० मील तक ज़रूर हवा है। यह भी हो सकता है कि हवा की यह परत, ८,००० मील तक चली गई हो। परन्तु उसके ऊपर हवा के होने की गुंजाइश नहीं है।

यद्यपि हम इस हवा की परत की दूरी को नहीं जान पाये हैं, तो भी हम उसका वज़न जान सकते हैं। यह भूमि के वज़न का १२ लाख हिस्सा मात्र ही है। अगर हम काग़ज़ों का ढेर रख दें, तो बजाय ऊपर के काग़ज़ों के, नीचे के काग़ज़ों पर अधिक भार होगा। जितनी आसानी से हम ऊपर के काग़ज़ हटा सकते हैं, उतनी आसानी से नीचे के काग़ज़ नहीं हटा सकते। इसी तरह भूमि से लगी हवा अधिक वज़नदार है।

परन्तु, ज्यों ज्यों ऊपर चलते जाते हैं, हवा का वज़न कम होता जाता है। वातावरण के दबाव को मापनेवाले यन्त्र "बेरोमीटर" से पर्वतों की ऊँचाई नापी जा सकती है। अगर हम "बेरोमीटर" को समुद्र की सतह से हजार फ़ीट ऊपर ले जायें, तो हवा का दबाव ३० गुना कम हो जाता है। समुद्र के किनारे के दबाव का तीसरा हिस्सा भी एवरेस्ट पर नहीं पाया जायेगा। इस तरह यह निश्चय रूप से जाना जा सकता है कि हवा की परत का आधा भाग, लगभग ३ मील मोटा है।

भूत कहाँ है?

कालिन्दी नदी के किनारे किसी गाँव में प्रज्ञावन्त नाम का एक ब्राह्मण रहा करता था। नाम तो बड़ा था, पर वह किसी काम का न था। उसकी एक सुन्दर सुगुणवती लड़की से शादी निश्चित की गई। उसका नाम सुलोचना था। जितना ब्राह्मण बदसूरत था, उतनी ही वह खूबसूरत थी। सुलोचना के माँ-बाप प्रज्ञावन्त को जानते थे। उन्होंने सोचा, अगर उसके साथ उनकी लड़की की शादी हुई, तो लड़की उनके गाँव में ही रहेगी।

विवाह का मुहूर्त निश्चय किया गया। सुलोचना को दुल्हिन बनाया गया। वह प्रज्ञावन्त से कतई शादी न करना चाहती थी, पर वहाँ उसकी कोई सुननेवाला न था। इसलिये उसने आत्म-हत्या करने की ठानी। शादी के दिन सवेरे, अन्धेरे में वह बगल में कलश रख, कालिन्दी नदी की ओर गई। कलश किनारे पर रख, साड़ी कमर में बाँध, वह नदी में उतरने को ही थी कि किसी ने पीछे से उसको पकड़ लिया।

उसको आत्म-हत्या करने से रोकनेवाले नौजवान का नाम चित्रवर्मा था। वह कुम्भकोणम में व्यापार करता था। वह वहीं बस गया था। वह विवाह करने के लिये इधर अपने गाँव में आया था। उसने बहुत-सी लड़कियाँ देखीं, पर उसे कोई भी पसन्द न आई; इसलिये वह घोड़े पर सवार हो, दूसरे गाँव में लड़कियों को देखने जा रहा था कि उसको सुलोचना दिखाई दी। उसको सन्देह हुआ। इसलिये झट उसने उसको आत्म-हत्या करने से रोका।

"तुम तो दुल्हिन बनी हुई हो! फिर यह क्या काम है?"—चित्रवर्मा ने सुलोचना से

श्री सरस्वती विश्वनाथन

पूछा। उसने बिना कुछ छुपाये, सब उसे बता दिया। "उस आदमी से शादी करने से अच्छा मरना है। आपने मुझे मरने भी न दिया।"—कहते कहते वह रोने लगी।

"अच्छा ही हुआ। क्या तुम मेरे साथ आओगी? मैं एक लड़की के लिये ढूँढ रहा हूँ। पर मुझे कोई सुन्दर लड़की न दिखाई दी। अगर तुम्हारे भाई-बन्धु को दूर देश में तुम्हें भेजने में आपत्ति न हो, तो मैं तुमसे विवाह करना चाहता हूँ।"—चित्रवर्मा ने कहा।

"जब मैंने आत्म-हत्या करने की सोची थी, तभी मैंने सब छोड़ दिया था। उन्होंने मेरा कौन-सा भला किया है? इसलिये मुझे पत्नी बनाकर आप ही मेरा भरण-पोषण कीजिये।"—सुलोचना ने कहा।

चित्रवर्मा ने उसको घोड़े पर चढ़ाया, और सूरज निकलने से पहिले तीन-चार गाँव दूर चला गया, फिर कुम्भकोणम अपने घर भी पहुँच गया।

उन दोनों के चले जाने के बाद, गाँव वालों ने नदी किनारे कलश देखा। उन्होंने जाकर कहा कि कोई नदी में डूब गया है। कलश की पहिचान से और सुलोचना को वहाँ न पा, यह बात पक्की हो गई कि सुलोचना ही नदी में डूब गई थी। शादी के लिये आये बरातियों ने, जिसके मन में जो आया, सुलोचना के बारे में कहा।

चाहे कोई भी मोद् हो, अगर वह शादी करना चाहे, तो उसे लड़की मिल ही जाती है। थोड़े दिनों बाद प्रज्ञावन्त की राधा नाम की एक लड़की से शादी हो गई। वह कालक्रम से गर्भवती हुई। गर्भवतियों का शुरू शुरू में स्वास्थ्य प्रायः अच्छा नहीं रहता। राधा को जल्दी ही उलटियाँ होने लगीं। वह घबराने लगी।

फिर आसपास की औरतों ने आकर कहा—"अरे पगली! तू इस हालत में उस घाट पर क्यों गई थी! क्या तुझे नहीं मालूम कि सुलोचना भूत बनकर वहाँ घूम-फिर रही है! शादी के समय वह जबर्दस्ती मर गई थी। क्योंकि तूने उसी से ही शादी की है, जिससे कि उसकी होनी थी। वह तंग किये बिना नहीं छोड़ेगी।"—उन्होंने राधा को इस तरह इधर उधर की बातें बताईं।

कहीं राधा और उसके गर्भ की सन्तान का बुरा न हो, प्रज्ञावन्त ने नज़र उतरवाई, मन्त्र पढ़वाये; भोज करवाये। हर कोई कहता कि राधा को सुलोचना का भूत ही सता रहा है। प्रज्ञावन्त भी लोगों की बातों में यकीन करने लगा। उसने आसपास के ओझाओं को बुलाकर भूतों को झड़वाया, मन्त्र पढ़वाये और पत्नी के गले में एक तावीज़ भी बंधवाई। एक के बाद एक ओझा ने भूत को भगाया। धीरे धीरे राधा की सेहत भी सुधरने लगी।

थोड़े दिनों बाद, राधा ने एक बच्चे को जन्म दिया। पर वह बच्चा मरा हुआ निकला। सब ने यही कहा कि वह भूत

की करतूत है। "चाहे कितनों ही ने भूत भगाये हों, पर क्या फ़ायदा! भूत का ठीक तरह उपशमन नहीं किया गया। मामूली ओझा भूतों को नहीं भगा सकते। तुझे तीर्थ यात्रा करनी चाहिये।"—कई ने प्रज्ञावन्त को सलाह दी।

"रामेश्वर जाना अच्छा है। इससे पहिले जब भी, किसी को भूत तंग करता, तो वह रामेश्वर जाया करता और भूत छूट जाता।"—एक ने बताया।

प्रज्ञावन्त ने अपनी पत्नी के साथ रामेश्वर जाने का निश्चय किया। अच्छा समय देखकर दोनों निकल पड़े। बहुत दिनों की यात्रा के बाद वे कुम्भकोणम् पहुँचे और वहाँ एक सराय में ठहरे। उस दिन रात को कोई चोर उनका समान-असबाब चोरी करके ले गये।

इस चोरी के कारण प्रज्ञावन्त और राधा के पास, सिवाय उन कपड़ों के, जो उन्होंने पहिन रखे थे, कुछ नहीं था। वे न आगे जा सकते थे, न पीछे ही। उनकी हालत देखकर वहाँ के लोगों ने कहा—"जो गुज़र गया है, उस पर न सोचिये। इस शहर में कर्ण का-सा

दानी व्यापारी है, जो आपकी ही तरफ़ का है। अगर आपने जाकर उनको अपनी कहानी सुनाई, तो आपकी यात्रा के लिए वे सब प्रबन्ध कर देंगे।"

प्रज्ञावन्त ने व्यापारी का घर पूछताछ करके मालूम कर लिया। पत्नी को साथ लेकर, वह उसके पास गया। जब प्रज्ञावन्त, व्यापारी से बात कर रहा था, तो उसकी पत्नी, व्यापारी की पत्नी के पास जाकर बातें करने लगी। उसने उसे बताया कि कैसे सुलोचना के भूत ने पकड़ रखा था, और उस भूत को छुड़वाने के लिए वे कैसे रामेश्वर जा रहे थे, और कैसे सराय में उसके समान की चोरी हो गई थी।

यह सुन उस व्यापारी की पत्नी ने झट अपने गहने उतार कर, राधा को दे दिये। उसने एक मामूली साड़ी पहिनकर, नौकर को भेजकर प्रज्ञावन्त को भी अन्दर बुलवाया।

प्रज्ञावन्त आ तो गया, पर उसने व्यापारी की पत्नी के मुँह की ओर देखा तक नहीं।

"क्यों भाई! क्या तुमने कभी पहिले मुझे देखा था?"—व्यापारी की पत्नी ने पूछा। प्रज्ञावन्त ने जब उसको देखा, तो मुख की बात मुख में ही रह गई। काटो तो खून नहीं। पत्थर की तरह खड़ा रहा।

सुलोचना ने राधा से कहा—"देखा! तुमने यह सोचकर कि मैं भूत बनकर, तुम्हें तंग कर रही हूँ, इसलिये ही तुम इतनी दौड़धूप कर रहे हो। कम से कम अब जान लो कि भूत भ्रम है, और घर जाकर आराम से रहो।" कहते हुए सुलोचना ने भी अपनी सारी कहानी सुनाई।

प्रज्ञावन्त और राधा, उनके घर दो दिन रहे, उनसे ही वापिसी यात्रा के लिये आवश्यक खर्च लेकर, वे घर चले गये।

प्रत्युपकार

विक्रमार्क हार न माननेवाला था। वह फिर पेड़ के पास गया। शव को उतारकर कन्धे पर डाल श्मशान की ओर चला। तब शव में स्थित बेताल ने कहा—"राजा! किसी दूसरे के लिए तुम्हें कष्ट उठाता देख, मुझे चण्डसिंह की बात याद आ रही है। मैं उसकी कहानी सुनाता हूँ, ताकि तुम रास्ते में थक न जाओ। सुनो"। बेताल ने यह कहानी सुनाई:

"पूर्वी समुद्र के किनारे पर, ताम्रलिप्ति नाम का एक नगर था। उस नगर के राजा का नाम चण्डसिंह था। वह सद्गुणी था। वह अपने आश्रितों की इतनी अच्छी तरह देख-भाल करता कि कई देशों से राज कुमार, उनकी नौकरी करने आये हुए थे। इन राज कुमारों में, दक्षिण देश का भी

बेताल कथाएँ

एक राज कुमार था, जिसका नाम सत्यशील था। सत्यशील के भाग्य ने साथ न दिया। उसे राजगद्दी छोड़नी पड़ी। वह फटेहाल, थका-माँदा, राजा के महल के पास पहुँचा। राजा ने उसे मामूली आदमी समझकर नौकरी में रख लिया।

सत्यशील ने समझा कि शायद नौकरी करना भी उसके भाग्य में लिखा है। वह दस साल तक, बिना कोई वेतन माँगे, घोड़ों की देख-रेख करता रहा।

एक दिन राजा, नौकर-चाकरों के साथ शिकार खेलने गया। राजा के आगे, घोड़े पर सवार हो जाने का काम, सत्यशील को सौंपा गया। शिकार खेलते खेलते, राजा नौकर-चाकरों के पीछे छोड़, जंगल में बहुत दूर चला गया। तब भी सत्यशील अपने घोड़े पर उनके आगे भागता जाता था।

जंगल निर्जन था। राजा जान गया कि वह रास्ता भटककर आ गया था। उसने सत्यशील से पूछा—"क्या तुम जानते हो, हम किस रास्ते से आये थे?"

"हाँ, महाराज! मैं जानता हूँ। अब दुपहर हो गई है। आप थोड़ी देर पेड़ के नीचे आराम कीजिये। बाद में आकर मैं रास्ता दिखा दूँगा।"—सत्यशील ने कहा।

"मुझे पहिले नहाना है। प्यास लग रही है। भूख भी जबरदस्त है। क्या किया जाय?"—राजा ने पूछा।

"थोड़ा सब्र रखिये! देखकर आता हूँ, कहीं आसपास कोई तालाब वगैरह तो नहीं है।" कहता कहता सत्यशील एक ऊँचे पेड़ पर चढ़कर इधर उधर, चारों ओर देखने लगा। थोड़ी दूर पर उसे एक छोटी-सी नदी दिखाई दी। वह पेड़ से उतरा। राजा को नदी में स्नान कराया। फिर अंगोछे में से दो आमले राजा को देते

हुए उसने कहा—"महाराज! इनसे आप अपनी भूख मिटा लीजिये।"

राजा को अचम्भा हुआ। "यह फल यहाँ कहाँ से आये? क्या इन्हें खाने से भूख मिट सकेगी?"—उसने पूछा।

"जी हुजूर! आपकी नौकरी में, मैं जब से हूँ—यानी दस वर्ष से, मैं इन्हें खाकर ही अपनी भूख मिटाता आया हूँ। मैंने और किसी चीज को न खाया। मैं अपने पास इन्हें हमेशा रखता हूँ।"—सत्यशील ने कहा।

जब राजा ने सत्यशील की कहानी सुनी तो उसके आश्चर्य का ठिकाना न रहा। राजा को यह सोच दुःख भी हुआ कि एक आदमी बिना किसी तनख्वाह के दस साल से काम कर रहा था, और उसने अपने खाने-पीने की भी परवाह न की।

शिकार से वापिस लौटकर, भरे दरबार में राजा ने सत्यशील की कहानी सुनाई। उसको बहुत-सा धन और बड़ी जागीर देकर उसको अपने निजी कर्मचारी के रूप में नियुक्त किया। इतना करने पर भी राजा को सन्तोष न हुआ कि उसने सत्यशील का ऋण चुका दिया है।

थोड़ा समय बीता। राजा ने विवाह करने का निश्चय किया। मन्त्रियों ने सलाह दी कि लंका द्वीप की राजकुमारी से शादी करना सब प्रकार से लाभप्रद था। शादी की बातचीत करने के लिये राजा ने सत्यशील को जहाज में लंका भेजा। राज पुरोहित के साथ, जब सत्यशील जहाज पर जा रहा था, तो विचित्र घटना घटी।

जहाज के रास्ते में, समुद्र की तह से एक सोने का झंडा आकाश को चूमता-सा ऊपर उठा। उसी समय समुद्र में भयंकर तूफ़ान उठने लगा। लोगों में हाहाकार मचा।

समुद्र उसकी यात्रा में इस तरह बाधा डालता देख सत्यशील को बहुत गुस्सा आया। वह तलवार लेकर समुद्र में कूद पड़ा। पर उसे समुद्र न दिखाई दिया। परन्तु उसे वहाँ सुन्दर सुन्दर उद्यान दिखाई दिये, जिनके बीच एक पार्वती का सुन्दर मन्दिर भी बना हुआ था।

सत्यशील मन्दिर में घुसकर देवी को नमस्कार कर बैठा ही था कि मन्दिर में उस समय एक बहुत ही सुन्दर, अद्भुत स्त्री आई। उसके साथ हज़ार सहेलियाँ भी हाथ में पूजा की सामग्री लिये हुए आईं।

उस स्त्री ने सत्यशील की ओर देखा तक नहीं। वह देवी की पूजा कर, अपनी सहेलियों के साथ वापिस जाने लगी। पर सत्यशील उस पर दीवाना-सा हो गया था। वह भी उनके पीछे पीछे चलने लगा।

वे सब स्त्रियाँ एक नगर में पहुँचीं। एक राज महल में आकर वे सब एक जगह बैठ गईं। सत्यशील, जिस पर मोहित हुआ था, उसको लाल आँखों से देखने लगा। उसको इस तरह घूरता देख उस स्त्री ने अपनी एक सहेली को इशारा किया। तुरन्त एक सहेली ने सत्यशील के पास आकर कहा—"स्वामी! आप कौन हैं? आप हमारे अतिथि के रूप में आये हैं। भोजन का समय हो गया है। आप पास की झील में नहा-धो आइये।"—उसकी उसने आवभगत की।

सत्यशील बड़ा खुश हुआ। झील में नहाने के लिए उतरा। दूसरे क्षण वह ताम्रलिप्ति नगर के उद्यान की बावड़ी में, ऊपर तैर आया। राज सैनिक उसको पहिचानकर, उसे राजा के पास ले गये।

सत्यशील का अनुभव सुनकर राजा को इस बात की फ़िक्र न थी कि उसका जहाज

डूब गया है, या उसकी शादी की बातचीत बीच में खतम हो गई है। वह यही सोच रहा था कि उसको सत्यशील का ऋण चुकाने का मौका मिला है। वह इसी में सन्तुष्ट हो रहा था। उसने सत्यशील से कहा—"तुम कुछ फ़िक्र न करो। यह मेरे जिम्मे रहे कि तुम्हारी उस लड़की से शादी करवा दूँ, जिस पर तुम दिल दिये हुए हो। हम तुरन्त उसी समुद्र-मार्ग पर जायेंगे।"

इस बार भी जहाज़ के रास्ते को रोकता हुआ एक सोने के झंडे का मस्तूल समुद्र से निकला। उसके देखते ही सत्यशील, और उसके पीछे राजा समुद्र में कूद पड़ा। थोड़ी देर में, वे पार्वती के मन्दिर के पास पहुँचे। वे देवी को नमस्कार कर, बाहर आ ही रहे थे कि पहिले की तरह वह स्त्री अपनी सहेलियों के साथ, मन्दिर में पूजा करने आई। वह राजा की ओर एक बार देखकर मन्दिर में चली गई।

राजा ने उसकी प्रतीक्षा न की। वह सत्यशील को लेकर, आसपास के उद्यान में भ्रमण करने लगा। वह स्त्री पूजा करके बाहर आई और राजा के लिए इधर उधर देखने लगी। जब उसने राजा को देखा,

तो एक सहेली को बुलाकर कहा—"यहाँ, जो थोड़ी देर पहिले महाराजा दिखाई दिया था, उसे ढूँढकर लाओ और हमारा आतिथ्य स्वीकार कराओ।"

वह सहेली बाग़-बगीचों में घूमती महाराजा के पास पहुँची। "महाप्रभु! हमारी मालकिन ने आपको न्योता दिया है। आप स्वीकार करेंगे?"—उसने पूछा।

"बुलाना ही काफ़ी है। हमें और कुछ नहीं चाहिये।"—राजा ने कहा।

सहेली ने यह बात उस स्त्री से कही। वह स्वयं भागी भागी, उनको बुलाने आई।

"आपने मेरे मित्र का सत्कार किया। उसके बारे में मैं जानता हूँ। वैसा आतिथ्य मैं नहीं चाहता हूँ।"—राजा ने कहा।

"आप बड़े हैं। आपके साथ हम ऐसा क्यों करेंगी।"—उस स्त्री ने कहा।

राजा, सत्यशील को साथ लेकर उस स्त्री के साथ गया। उसने उनका खूब आदर-सत्कार किया। "स्वामी! मैं कालनेमी नाम के दैत्य की पुत्री हूँ। विश्वकर्मा ने मेरे पिता के लिए यह बड़ा नगर बनाया है। इस नगर में न कोई बूढ़ा होता है, न मरता ही है। मेरा पिता इस नगर को छोड़कर गया था, इसलिये ही विष्णु द्वारा मारा गया। अब मैं ही इस नगर का परिपालन कर रही हूँ। आप जैसे बड़ों का पधारना, इस नगर में पहिली बार हो रहा है। आप जो कुछ कहेंगे, वही करने के लिए तैयार हूँ।"—उस स्त्री ने कहा।

"ऐसी बात है, तो मेरे मित्र से अभी विवाह कीजिए।"—राजा ने कहा। वह तुरन्त मान गई। उन दोनों का विवाह कर राजा ने सत्यशील से कहा—"मैंने तुमसे कभी दो आमले लेकर खाये थे। उनमें से एक आमले का कर्ज़ मैंने नहीं चुकाया है।" यह कह, वह पास की झील में कूदा, और दूसरे क्षण अपने नगर में तैर आया।"

यह कथा सुना बेताल ने पूछा—"राजा! चन्द्रसिंह और सत्यशील, दोनों में किसका साहस अधिक है?"

"सत्यशील का साहस ही अधिक है। वह यह बिना जाने ही कि समुद्र में क्या है, समुद्र में कूद पड़ा था। सब कुछ जान-बूझकर ही राजा समुद्र में कूदा था।"—विक्रमार्क ने जवाब दिया।

राजा का मौन-भंग हो जाने पर, बेताल शव के साथ अदृश्य हो, पेड़ पर चढ़ बैठा।

चालाक माँ-बेटी

[४]

अहमद के भाग्य अच्छे न थे। वह थोड़ी दूर ही गया था कि उसको हसन सामने से आता हुआ मिला। उसने यों ही पूछा—"क्यों अहमद! इस सरदी में यह क्या पोशाक पहिन रखी है! इस तरह घूमना सेहत के लिये अच्छा नहीं है।"

"भाग्य को कोई नहीं धोखा दे सकता हसन! एक लड़की मेरी यह हालत कर गई है। क्या तुम उसका कुछ पता-ठिकाना जानते हो?"—अहमद ने धीमे से पूछा।

"मैं उसको जानता हूँ, उसकी माँ को भी जानता हूँ! क्यों जाकर उनको पकड़ लाऊँ?"—हसन ने पूछा।

"वह कैसे?"—अहमद ने पूछा।

"इस में क्या रखा है। खलीफा के पास जाकर कहो कि यह तुम्हारे बस की बात नहीं है और यह काम मुझे सौंप दिया जाय।"—हसन ने सलाह दी।

अहमद ने वही किया। खलीफा ने हसन को बुलाकर पूछा—"क्या तुम बुढ़िया को पकड़ सकोगे?"

"मैं उस बुढ़िया को जानता हूँ। मैं नहीं कह सकता कि धन के लालच से उसने ये चोरियाँ की हैं। शायद उसने अपनी चालाकी आपको दिखाने के लिए यह सब किया है। अगर आप यह मान जायें कि अगर वह चोरी का माल वापिस कर देगी, तो आप उसे सज़ा न देंगे, तो उसको मैं आपके सामने हाजिर कर सकता हूँ।"—हसन ने खलीफा से कहा।

कुमारी रशिया रेहाना

खलीफ़ा यह मान गया। हसन सीधे दिल्ला के घर गया। किवाड़ खटखटाने पर ज़ीनाब ने दरवाज़ा खोला। "अपनी माँ को बुलाओ। खलीफ़ा उसे बुला रहे हैं। उन्होंने सज़ा न देने का वचन दिया है। चुराया गया सारा माल घोड़ों पर लदवाओ।"—हसन ने कहा।

दिल्ला ऊपरली मंज़िल से उतरकर आई। हसन ने सारी बातें उसे समझा दीं। चोरी का माल घोड़ों पर लादा गया। दिल्ला ने अच्छे कपड़े पहिने। वह खलीफ़ा को देखने के लिए तैयार हो गई।

"क्या सारा समान लद गया है?"—हसन ने पूछा।

"सिवाय अहमद के कपड़ों के सब कुछ दे दिया है। उस चोरी से मेरा कोई वास्ता नहीं है।"—दिल्ला ने कहा।

"हाँ, हाँ! वह तो किसी दूसरे की करतूत है।"—हसन ने हँसते हुए कहा। दोनों मिलकर दरबार में गये।

बुढ़िया को देखते ही खलीफ़ा ने आज्ञा दी कि बुढ़िया का सिर कटवा दिया जाय। तब हसन ने विनयपूर्वक खलीफ़ा को उनके दिये गये वचन के बारे

में याद दिलाई तो उन्होंने दिलैला से पूछा—"तुम्हारा नाम क्या है?"

"मैं उसकी पत्नी हूँ, जो आप के लिये कबूतरों द्वारा डाक भेजा करता था। मेरा नाम दिलैला है।"—दिलैला ने कहा।

"तुमने इन सब को क्यों धोखा दिया है?"—खलीफ़ा ने पूछा।

दिलैला ने खलीफ़ा के सामने साष्टांग करके कहा—"हुज़ूर माफ़ करें। मैंने धन के लालच में आकर चोरी नहीं की है। जब मुझे यह मालूम हुआ कि चोरी में माहिर, अहमद और हसन को अच्छी नौकरियाँ दी हैं, तब मैंने सोचा कि अगर मैं उनसे अधिक चालाकी से चोरी करूँ, तो आप मुझे भी वह काम करने देंगे, जो मेरे पति करते आये थे।"

खलीफ़ा ने फ़रियादियों की चीज़ें वापिस कर दीं। तब उन्होंने दिलैला से पूछा—"कहो क्या चाहती हो?"

"हुज़ूर मुझे, मेरे पति का काम और उनका वेतन मेहरबानी करके दिलवायें। मुझे यह काम अच्छी तरह आता है। मैं और मेरी लड़की ही कबूतरों को भेजा करती थीं, उन पर चिट्ठियों को बांधा करती

मकान दिया था, उसमें ले गई। उसी दिन, उसने आदमी की पोशाक पहिनी, और सुनहली पगड़ी पर चान्दी का कबूतर लगा, डाक में भेजी जानेवाली चिट्ठियों को लाने के लिए दरबार में गई। चालीस गुलामों को भी उसने जरीदार कपड़े दिलवाये। उसने अपने नये मकान में चालीस खूंटियाँ गड़वाईं, और उन पर अहमद, और गूनी अलि और उसके चालीस सिपाहियों के कपड़े सजाकर रख दिये। इस तरह दिलैला ने अपनी इच्छा पूरी कर ली। माँ-बेटी आराम से रहने लगीं।

थीं। कबूतरों द्वारा डाक भेजने के लिये, हुजूर ने एक मकान दिया था; चालीस गुलाम, चालीस शिकारी कुत्ते देकर कबूतरों के पहरे के लिए प्रबन्ध किया था। वह सारा काम मैंने ही करवाया था, न कि मेरे पति ने।"—दिलैला ने अर्ज किया।

खलीफ़ा ने तुरन्त हुक्म दिया कि कबूतरों द्वारा डाक भेजने का सारा काम दिलैला को सौंप दिया जाय। गुलाम और शिकारी कुत्ते भी उसे दिला दिये।

दिलैला अपना सारा समान, कबूतरों द्वारा डाक भेजने के लिए, खलीफ़ा ने जो

इसके थोड़े दिनों बाद, कैरो शहर से, "पारा" नाम का एक नौजवान बगदाद शहर में आया। वह नाम उसे फबता था, लेकिन उसका नाम अलि था। वह था तो बड़ा खूबसूरत, पर पक्का चोर था। आजकल अहमद, जो कोतवाल बना हुआ था, कभी कैरो में चोरी किया करता था। 'पारा' ने भी उसी की तब शागिर्दी की थी। जब अहमद बगदाद में चोरी करके मशहूर हो गया था और कोतवाल बना दिया गया था, तब 'पारा' कैरो में चोरों का सरदार था। क्योंकि वह

कई बार पकड़ा गया था और हर बार हाथ से निकल गया था, इसीलिये लोग उसको 'पारा' कहकर पुकारा करते थे।

'पारा' अलि को अहमद ने ही बग़दाद बुलाया था। जब से उसे दिलैला के सामने हार माननी पड़ी थी, तब से वह 'पारा' को याद कर रहा था। अगर वह उसके साथ होता, तो उसका इस तरह अपमान न होता, अहमद अक्सर यह सोचा करता। अब वह खुद दिलैला से बदला न ले सकता था। क्योंकि वह उसके समान सरकारी कर्मचारी थी, इसलिये 'पारा' ही उसका कुछ कर सकता था।

'पारा' अलि बग़दाद पहुँचकर अहमद के घर गया। उसको देखते ही अलि का मन बल्लियों उछलने लगा। "अरे भाई! तुम से मुझे कुछ काम है। उस के होने के बाद, मैं तुम्हें खलीफ़ा के पास ले जाऊँगा और तुम्हें अच्छी नौकरी दिलवा दूँगा।"—अहमद ने 'पारा' से कहा।

'पारा' ने अहमद के घर दो दिन बिताये। बाद में, घर में बैठे बैठे उसको ऐसा लगा, जैसे क़ैद में बन्द कर दिया गया हो। तीसरे दिन अहमद जब दरबार में गया, तो वह भी घर से खिसक गया। वह घूम-फिरकर शहर देखना चाहता था।

वह थोड़ी दूर गया था कि उसको मर्दों का वेष पहिने, सोने की टोपी पर, चान्दी का कबूतर लगाये, घोड़े पर सवार हो एक स्त्री जा रही थी। उसके पीछे चालीस गुलाम, लाल जरीदार कपड़े पहिने जा रहे थे। वे सिवाय, दिलैला और उसके नौकरों के कोई न था। वह राज महल से अपने मकान की ओर जा रही थी।

दिलैला 'पारा' को देखकर, उसके सौन्दर्य से प्रभावित हुई। परन्तु उसको

उसमें, अपने दुश्मन अहमद के कुछ हाव-भाव दिखाई दिये। अलि अहमद की हर बात में नकल करने लगा था। दिलैला ने यह भी देख लिया था कि वह अहमद के घर की ओर से ही आ रहा था।

उसने घर जाते ही, अपनी लड़की जीनाब से, उस नौजवान की शक्ल-सूरत का बयान करते हुए कहा—"हम से बदला लेने के लिए ही अहमद ने इस नौजवान को कहीं से बुलाया है, ऐसा मुझे लगता है। ऐसा भी मालूम होता है कि वह कल परसों ही यहाँ आया है। अब हमें होशियारी से रहना होगा।"

यह सुनकर जीनाब ने कहा—"तुम भी क्या कहती हो माँ! तुमने तो बड़ों को कुछ न समझा। अब इस छोकरे को, जिसके अभी ठीक ठीक मूँछ-दाढ़ी भी नहीं आई है, देखकर घबरा रही है!" भड़कीले कपड़े पहिन, आँखों में काजल लगाये, मटकती मटकती वह गली में चली गई।

धीमे धीमे, जब वह एक दुकान पर पहुँची, तो उसको वहाँ 'पारा' दिखाई दिया। माँ ने जो हुलिया बताया था,

'पारा' का हुलिया ठीक उससे मिलता था। जीनाब ने उसे पहिचान लिया। उसे धक्का देती हुई, वह आगे बढ़ गई। फिर पीछे मुड़कर पूछा—" आँखें नहीं हैं क्या?"

'पारा' उसके सौन्दर्य को देखकर भौचक्का रह गया। उसने मुस्कराते हुए पूछा—" क्या खूबसूरत हो....! कौन हो तुम?"

" मैं एक व्यापारी की लड़की हूँ। एक और व्यापारी की पत्नी हूँ। आप इस शहर में नये मालूम होते हैं! आपका कहाँ ठिकाना है?"—जीनाब ने पूछा।

'पारा' चाहता था कि अपने बारे में किसी को कुछ न मालूम हो, इसलिये उसने कहा—" अभी तो कोई ठिकाना नहीं है। कहीं जगह ढूँढनी है।"

" ऐसी बात है, तो आइये, हमारे घर ठहरिये। हमारा बड़ा घर है। जब मेरा पति दुकान जाता है, तब मैं अकेली ही रहती हूँ।"—जीनाब ने कहा।

उसके साथ जाना शायद अच्छा न हो। 'पारा' सन्देह करने लगा। क्योंकि वह शहर में नया था और वह लड़की उसकी दुश्मन भी न हो सकती थी, इसलिये उसने

उसके साथ जाने का निश्चय किया। ज़ीनाब उसको घुमा-फिराकर, एक बड़े मकान के सामने ले गई, और थैले में हाथ डालकर ताले की चाबी खोजने लगी। वह एक बड़े व्यापारी का घर था। फ़िलहाल उस घर में कोई न था। व्यापारी सवेरे ही घर में ताला लगाकर चला जाता था, शाम को अन्धेरा होने के बाद आता। यह ज़ीनाब भली-भांति जानती थी।

"अरे! चाबी कहीं गिर गई है! क्या आप इस ताले को खोल सकते हैं?" —ज़ीनाब ने 'पारा' से पूछा।

देखते देखते 'पारा' ने ताले को खोलकर रख दिया। ज़ीनाब तुरत समझ गई कि हो न हो, यह पहुँचा हुआ चोर है।

दोनों अन्दर गये। "आप बैठक में बैठिये। मैं कुएँ से पानी लाकर रसोई करती हूँ।" कहती कहती, घड़ा लेकर ज़ीनाब सहन में गई। थोड़ी देर बाद, ज़ीनाब कुएँ से, खूब ज़ोर से चिल्लाई। 'पारा' जब कुएँ के पास गया, तो ज़ीनाब कुएँ में झुककर देख रही थी।

"क्या हुआ?"—'पारा' ने पूछा।

"मेरी हीरों की अंगूठी कुएँ में गिर गई है। पाँच सौ दीनारें देकर उसे खरीदा था। अगर मेरे पति को यह मालूम हो गया तो वह मुझे मार देगा।"—ज़ीनाब ने रोते-धोते कहा।

"तुम घबराओ मत! मैं उतरकर देखता हूँ।" वह कुएँ से एक रस्सी बाँधकर, उसके सहारे कुएँ में उतर गया। जब उसने पानी में डुबकी लगाई, तो ज़ीनाब ने रस्सी ऊपर खींच ली। "तुझे अहमद आकर ऊपर खींच लेगा।" कहकर ज़ीनाब उसके कपड़े समेटकर घर चली गई।

(अभी और है)

बताओगे ?

१. संविधान द्वारा भारत की कितनी भाषायें स्वीकृत हैं और वे कौन-सी हैं?

२. अखिल भारतीय कांग्रेस का पिछला अधिवेशन कहाँ हुआ था, और उसके अध्यक्ष कौन हैं?

३. उस नाग जाति के नेता का नाम बताओ, जिनकी आजकल बहुत चर्चा हो रही है?

४. भारत का सब से ऊँचा हिल-स्टेशन कौन-सा है, और उसकी ऊँचाई क्या है?

५. दुनियाँ की ५० प्रतिशत चाय कहाँ पैदा होती है?

६. जिनकी इस महीने, बड़े धूम-धाम से जयन्ती मनाई जा रही है?

७. नागार्जुन कौन थे?

८. भारत के ऐसे पड़ोसी बताओ, जहाँ अब भी बौद्ध धर्म अधिक प्रचलित है?

९. ईसा और मोहम्मद, बुद्ध के बाद हुए कि पहिले?

१०. बुद्ध वर्ष कब से शुरू होता है?

पिछले महीने के 'बताओगे ?' के प्रश्नों के उत्तर:

१. ईडन।

२. श्री तिरुमल राव।

३. प्रशान्त महासागर।

४. पामीर।

५. उत्तर अमरीका में।

६. नौवें।

७. जब्बर।

८. हाँ, उसके दो भाग हैं—एक सार्वजनिक, दूसरा विशेष सार्वजनिक। ये सरकार के अन्तर्गत हैं। विशेष भाग में कोई भी भाग ले सकता है।

९. ५,९९,२१,०००।

१०. केन्द्रीय सरकार का।

पुण्यात्मा

एक गाँव में बनवारी लाल और राम लाल नाम के दो बूढ़े रहा करते थे। बनवारी लाल का अच्छा खाता-पीता परिवार था। उसके पास २० एकड़ ज़मीन थी, कई जोड़ी बैल, दालान, घर था। पर राम लाल की स्थिति उतनी अच्छी न थी। उसके पास सिर्फ़ पाँच एकड़ की ज़मीन थी। परन्तु दोनों के घर अगल-बगल में थे, और दोनों भाई-भाई की तरह रहते थे।

वे दोनों चाहते थे कि कभी फ़ुर्सत निकालकर काशी में विश्वेश्वर महाराज के दर्शन कर आयें। राम लाल को तो हमेशा ही काशी जाने के लिए फ़ुर्सत थी, परन्तु बनवारी लाल को हमेशा कुछ न कुछ लगा रहता। एक साल घर के अगले हिस्से में दूसरी मंज़िल बनवायी; एक और साल उसने पशु-शाला बनवाई।

"क्यों बनवारी! कम से कम इस साल काशी चलोगे कि नहीं?" रामलाल ने पूछा।

"अरे यार चले चलेंगे! थोड़ा बहुत पैसा तो जमा-जुटा लेने दो। कम से कम हाथ में सौ रुपये तो होने ही चाहिये। तुम तो जहाँ चाहे, वहाँ पैसे पैदा कर लेते हो।"—बनवारी लाल ने कहा।

"तुम बस इतना कह दो कि चले चलेंगे, और मैं रुपये-पैसे का इंतज़ाम कर दूँगा। तुम्हारे पास तो काफ़ी पैसा है, फिर भी तुम ऐसी बातें कर रहे हो।"—राम लाल ने कहा।

कुछ भी हो बनवारी, राम लाल के कहने-सुनने से तंग आ गया। उस साल उसने काशी जाने की ठानी। वह एक महीने तक अपने लड़के को यह समझाता रहा कि उसकी ग़ैर-हाज़िरी में कैसे खेती

श्रीमती मनोरमा सिन्हा

की जाय, कैसे पैदावार बेची जाय, किसे किसे कितना कितना दिया जाय, आदि आदि। सब काम सौंपकर, वह एक दिन सुमुहूर्त में काशी के लिए निकल पड़ा।

राम लाल ने अपने पास के दो पशु बनिये को बेच दिये, और उससे सौ रुपये वसूल कर लिये। उसने अपने लड़के को बुलाकर कहा—"बेटा! तू तो सब जानता ही है! घर-द्वार के बारे में होशियार रहना। मेरी गैर-हाजिरी में कोई नुक़सान न हो।"

बनवारी लाल और राम लाल काशी के लिये चल पड़े। एक महीने तक तो यात्रा अच्छी रही। जहाँ जहाँ उन्होंने पड़ाव किया या तो उन्हें सराय में जगह मिल गयी, नहीं तो किसी के घर खाने-पीने, रहने का इंतजाम हो गया। कइयों ने उनको काशी यात्रा पर जाते देख, रास्ते में खाने-पीने के लिये अच्छे अच्छे पकवान दिये। साथ जो रुपया-पैसा लाये थे, उसे खर्च करने का मौका ही न आया।

पर जब विन्ध्य प्रान्त के पास पहुँचे, तो कठिनाइयाँ आने लगीं। उस साल, उस प्रान्त में वर्षा न हुई। प्रजा भयंकर अकाल से पीड़ित थी। कुएँ, तालाब, झीलें

सब सूख गई थीं। पीने को पानी भी नसीब न होता था। पानी खरीदना पड़ता था। सरायें बन्द कर दी गई थीं। बहुत पैसे देने पर भी रोटी न मिलती थी।

"जब तक हम इस इलाके को पार कर नहीं जाते, तब तक अधिक पड़ाव करने से काम न चलेगा।"—बनवारी लाल ने कहा। रात को दो-तीन घंटे सोते, फिर वे लोग चलने लगते। भूमि कराह-सी रही थी। कहीं कोई न दिखाई देता था। परन्तु दोनों बूढ़े बहुत श्रद्धापूर्वक काशी की तरफ़ चलते जाते थे।

एक दिन दुपहर को, राम लाल ने बनवारी लाल से कहा—"मुझे बहुत प्यास लग रही है। उस पासवाले घर में जाकर, ज़रा-सा पानी पी आऊँ।"

"मैं चलता रहूँगा, तुम मुझे आ मिलना।" कहता बनवारी लाल चलता गया। राम लाल ने उस घर के सहन में घुसकर पूछा—"कोई है यहाँ?" कोई जवाब न आया। राम लाल ने घर के अन्दर घुसकर देखा। घरवाले, इधर उधर, बेहोश पड़े थे। वे ज़िन्दा हैं या मर गये हैं, यह भी राम लाल न जान सका।

घर एक गरीब काश्तकार का था। वह अपनी माँ, पत्नी, लड़का और लड़की, का, अपनी एक सेन्ट भूमि में खेती कर निर्वाह करता था। फ़सल होती तो खाते, नहीं तो फ़ाके करते। अकाल के कारण उनकी बुरी हालत हो गई। इस साल एक दाना भी अनाज न पैदा हुआ था। पहिले तो उन्होंने अपनी भैंस बेची। बाद में उन्होंने घर के बर्तन बेचने शुरु किये। घर का सब कुछ बेच दिया। एक सप्ताह से किसी ने कुछ न खाया था। पानी भी न पिया था। जब काश्तकार की माँ घड़ा लेकर पानी भरने गई, तो रास्ते में ही मूर्छित हो गई। घड़ा फूट गया। वह वहाँ से जैसे तैसे घर पहुँची।

परन्तु यह कुटुम्ब अब भी जीवित था। छोटे बच्चे की हालत देखकर, तो राम लाल का दिल पिघल आया। उसने सारा घर खोजकर, कहीं एक छोटी-सी लुटिया पाई। कुआँ बहुत दूर था। उस कुएँ से उस लुटिया में पानी लाकर, उसने सबको पिलाया। राम लाल की पोटली में दो तीन रोज़ के लिये काफ़ी रोटियाँ थीं। उसने उन्हें पानी में भिगोकर, पहिले लड़के

को खिलाया, फिर बड़ों को दिया। एक घंटे में फिर सब उठकर बैठ सके।

पर अभी आफ़त ख़तम न हुई थी। इसलिये राम लाल पास के कस्बे में गया और वहीं से उनके लिये, दो-तीन बर्तन, कुछ चावल, दाल, नमक, मिर्च वग़ैरह ख़रीद लाया। आसपास से सूखी लकड़ियाँ भी बटोर लाया। कितने ही दिनों बाद उन्होंने भर पेट भोजन किया।

राम लाल सब के लिये सचमुच राम के समान हो गया। बच्चे तो "बाबा" कहते इसके पीछे लग गये। उनको फिर खेलता-कूदता, हँसता-बोलता देख राम लाल फूला न समाया। उस रात को वहाँ से चलकर, उसने बनवारी लाल से मिलने की सोची; पर अगर वह चला जाता, तो इन बिचारों का क्या होता! एक और सप्ताह में इनकी हालत वही पुरानी हो जाती। जब वह दृश्य राम लाल को याद आता तो उसे रोमांच होता।

दो दिन गुज़र गये। "बाबू! आप हमारी मदद करने भगवान की तरह आये। इस जनम में आपका ऋण न चुका पायेंगे। पर आप हमारी मदद कब तक

करते रहेंगे, जब भगवान ने ही हमें छोड़ दिया है!"—काश्तकार ने कहा।

"कुछ न कुछ तो करना ही होगा, बेटा!" ज़मीन में हल जोतो। हम दोनों हैं ही। खेती करें, सहन में शाक-सब्ज़ी पैदा करें।"—राम लाल ने कहा।

"हल और गाड़ी तो कभी का बेच चुका हूँ। ज़मीन भी ३० रुपये के लिए गिरवी रख दी है। अगर कुछ पैदा भी करूँ तो कर्ज़दार हड़प ले जायेंगे।"—काश्तकार ने कहा। उसी दिन राम लाल, काश्तकार को साथ ले गया और रुपये देकर, उसकी ज़मीन

छुड़वा ली। चालीस रुपये खर्च कर, उसने उसके लिए हल, और गाड़ी भी खरीद कर दी। ऐसा लगा, मानों काश्तकार और उसके परिवार में नई शक्ति आ गई हो। उनका उत्साह दुगुना हो गया।

तीन महीने बीत गये। खेत में अच्छी फ़सल लहलहाने लगी। घर के आँगन में भी खूब शाक-सब्जी लग रही थी। उसी में से उनकी काफ़ी आय हो रही थी।

"अब मैं जा सकता हूँ। बनवारी लाल अब तक काशी पहुँच चुका होगा। पुण्यात्मा है।"—राम लाल ने सोचा। अब उसने जाना चाहा, तो बच्चे रो रोकर कहते—"बाबा तुम मत जाओ।"

राम लाल जान गया कि वे उसको जाने नहीं देंगे। इसलिये एक दिन रात को, अपनी चीज़ों की पोटली बाँधकर वह निकल पड़ा। हिसाब देखा तो उसके पास केवल १२ रुपये ही रह गये थे। "इस पैसे से मैं काशी तक कैसे पहुँच सकूँगा? इस साल विश्वेश्वर महाराज की पूजा नहीं है।" यह सोच राम लाल वापिस चलने लगा, और एक महीने में घर पहुँच गया।

उस दिन, राम लाल के प्यास बुझाने के लिए जाने के बाद, बनवारी लाल एक मील चलकर, एक पेड़ के नीचे भोजन के लिए बैठा। भोजन के बाद काफ़ी देर तक वह सोता रहा। तब भी राम लाल न आया। बहुत इन्तज़ार करने पर भी जब राम लाल न आया, तो बनवारीलाल को एक सन्देह हुआ—"कहीं ऐसा तो नहीं हुआ कि जब वह सो रहा था, वह आगे निकल गया हो! पानी के लिए गया हुआ आदमी, भला घंटों कैसे आये बगैर रहेगा!" यह सोचकर बनवारी लाल अपने रास्ते पर चलने लगा।

सप्ताह गुज़रे—महीने गुज़रे। बनवारी लाल को राम लाल न दिखाई दिया। फिर भी वह हर गाँव में पूछता जाता—"क्या कोई गंजा खोपड़ी वाला आदमी इस तरफ़ आया था?" पर कहीं कुछ न मालूम हुआ।

आखिर बनवारी लाल काशी पहुँचा। गंगा में स्नान कर उसने सब मन्दिरों की परिक्रमा की। फिर वह भगवान विश्वेश्वर का मन्दिर देखने गया। मन्दिर लोगों से लबालब भरा था। उस भीड़ में, बनवारी-लाल, मूर्ति के समीप न पहुँच सका। जो सौभाग्यशाली थे, वे नज़दीक से लिंग

का दर्शन कर रहे थे। दियों की रोशनी में उनके मुँह बनवारी लाल को साफ़ दिखाई दे रहे थे। देखता देखता बनवारी लाल चकित रह गया। क्योंकि एक व्यक्ति, जब लिंग को सिर नवा कर उठा, तो उसका गंजा सिर चमक रहा था। बनवारी लाल को राम लाल साफ़ दिखाई दिया।

बनवारी लाल बहुत खुश हुआ। "अरे! तुम मुझसे पहिले ही आकर अन्दर घुस गये!"—उसने मन ही मन राम लाल की प्रशंसा की, और बाहर दरवाज़े के पास खड़ा हो गया। पर राम लाल बाहर आता नहीं लगता था। उसने शाम तक प्रतीक्षा की, पर राम लाल बाहर न आया।

काशी में बनवारी लाल तीन दिन ठहरा। एक बार भी वह मूर्ति के समीप न जा सका। परन्तु तीनों दिन उसको मूर्ति के पास राम लाल दिखाई दिया।

बनवारी लाल, गया, प्रयाग आदि देख कर घर की ओर चला। उसे रास्ते में वही घर दिखाई दिया, जहाँ राम लाल पानी पीने गया था। वहाँ पूछने पर, राम लाल के बारे में कुछ मालूम हो सकेगा, यह सोचकर, वह काश्तकार के घर गया।

वहाँ बनवारी लाल को राम लाल के बारे में सब कुछ मालूम हो गया। अगर वह उसी घर में तीन महीने रहा हो, तो उससे पहिले उसका काशी पहुँचना असंभव था।

"राम लाल! तुम सचमुच पुण्यात्मा हो। तुम ने यह सिद्ध कर दिया है कि विश्वेश्वर के दर्शन कर पवित्र होने के लिए, काशी तक जाने की ज़रूरत नहीं है।" सोचता सोचता, बनवारी लाल घर की ओर चलता गया।

[टाल्स्टाय की एक कहानी के आधार पर]

फ़ोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता

जुलाई १९५६ :: पारितोषिक १०)

कृपया परिचयोक्तियाँ कार्ड पर ही भेजें ।

ऊपर के फ़ोटो के लिए उपयुक्त परिचयोक्तियाँ चाहिए । परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्द की हों और परस्पर संबन्धित हों । परिचयोक्तियाँ पूरे नाम और पते के साथ कार्ड पर ही लिख कर निम्नलिखित पते पर ता. १०, मई के अन्दर भेजनी चाहिये ।

फ़ोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता
चन्दामामा प्रकाशन
वडपलनी :: मद्रास - २६

मई – प्रतियोगिता – फल

मई के फ़ोटो के लिये निम्नलिखित परिचयोक्तियाँ चुनी गई हैं ।

इनके प्रेषक को १० रु. का पुरस्कार मिलेगा ।

पहिला फ़ोटो : 'दिल ग़म को खा रहा है, ग़म दिल को खा रहा है !'

दूसरा फ़ोटो : 'जब से चमन छूटा है, यह हाल हो गया है !'

प्रेषक : श्री हंसराज आसर, घाटकोपर, बम्बई ३९.

मोमबत्ती से मुहरें

मामूली मोम बत्ती से मोहरें निकालना बहुत आसान है। मैं एक दिन अपने एक मित्र के यहाँ गया। वहाँ मित्र के परिवार ने मुझसे एक जादू दिखाने के लिए कहा। मैंने यह जादू दिखाकर उनका मनोरंजन किया :

मैंने कोट उतार कर कुरते की आस्तीनें मोड़ लीं। सब के देखते हुए मैंने एक मोम बत्ती मँगाकर जलाई। फिर मैंने अपने हाथ जलती मोम बत्ती के सामने रखकर दिखाये। मेरे हाथ में बहुत सी-मोहरें थीं। सब चकित हो गये।

इस विचित्र जादू का रहस्य मोम बत्ती में नहीं है। सारा रहस्य दियासलाई की डिब्बी में है। अगर आप चित्र को गौर से देखें तो यह बात साफ़ मालूम हो जायेगी। एक दियासलाई की डिब्बी लीजिये, जिसमें ५० सलाइयाँ हों। उसको आधा बाहर निकालकर, खाली जगह में, चार-पांच मोहरें रख दीजिये। इस अध-खुली दियासलाई की डिब्बी को मेज़ पर रख दीजिये। किसी को भी कोई सन्देह न होगा।

इस अधखुली दियासलाई की डिब्बी में से एक सलाई निकाल कर मोम बत्ती जलाइये। जब वह जल रही हो, तब दियासलाई की डिब्बी बन्द कर दीजिये। (चित्र १ और २ देखिये।) दियासलाई के बन्द करने से उसमें रखी मोहरें हथेली पर आ जायेंगी। उनको हथेली में ही रखे रखिये। हाथ जोड़कर उनको बिना दिखाये रखने में ही चतुरता है।

इस प्रकार रखी मोहरों को बाद में दर्शकों को दिखाया जा सकता है। यदि आप ध्यान से यहाँ दिये गये चित्रों को देखें, तो सारा जादू आसानी से समझ में आ जायेगा। पहिले चित्र में, मोम बत्ती और जादूगर के हाथ में अधखुली दियासलाई की डिब्बी दिखाई देती है। दूसरे चित्र में मोम बत्ती के जलाने के बाद हथेली में दियासलाई की डिब्बी को बन्द करने पर मोहरों का आना दिखाया गया है। तीसरे चित्र में दायें हाथ में मोहरें रखी हुई हैं और चौथे चित्र में मोम बत्ती से आई हुई मोहरें हैं। दियासलाई की डिब्बी में रखी मोहरें पाँचवें चित्र में दिखाई गई हैं।

कई जादूगर मोहरों को बाँध देते हैं। पर मेरी राय में उनका अलग अलग रखना ही अच्छा है।

[पाठक यदि इस सम्बन्ध में और जानकारी चाहें तो प्रोफेसर साहब से 'चन्दामामा' का उल्लेख करते हुए, अंग्रेज़ी में पत्र-व्यवहार कर सकते हैं। उनका पता यों है :

प्रोफेसर पी. सी. सरकार,
मेजीशियन,
पोस्ट बक्स नं: ७८८८, कलकत्ता-१२.

रंगीन चित्र-कथा

एक दिन का राजा—८

अहमद के आने से पहिले, अबू ने हर वज़ीर की बात ग़ौर से सुनी और जिन जिन को नये तौर पर मुकर्रर करना था, मुकर्रर किया। जिनको नौकरी पर से हटाना था, उनको हटा भी दिया।

अबू ने खज़ांची को बुलाकर कहा—"फलाने मोहल्ले में अबू अलि हसन का मकान है। उस घर में रहने वाली अबू की माँ के पास हज़ार सोने

की दीनारें भिजवाओ। उनसे कहना कि दीनारें खलीफ़ा ने भिजवाई हैं।"

खज़ांची झुक झुककर सलाम करता चला गया। कोतवाल अहमद ने आकर कहा कि दण्ड-नायक और उसके नौकरों को सज़ा दे दी गई है। उसके बाद अबू ने उस दिन के लिए दरबार समाप्त कर दिया। भोजनशाला में दासियों ने उसको सोने के बर्तनों में स्वादिष्ट पकवान परोसे। अबू अल हसन को अब यह सन्देह नहीं था कि वह खलीफ़ा नहीं है।

भोजन के बाद फल लाये गये। फिर शरबत वग़ैरह। गन्मा नाम की एक दासी ने स्वयं एक लोटे में शरबत लाकर दिया। उसके पीते ही, अबू मूर्छित हो गया। पहिले से ही उसमें मूर्छा की दवा मिला दी गई थी। उसी दिन रात को, खलीफ़ा के नौकरों ने मूर्छित अवस्था में उसको उसके घर पहुँचा दिया।

अबू अलि हसन सवेरे सवेरे उठा। उठते ही उसने पूछा—"कौन है वहाँ?" पर वहाँ कोई न था। जब उसने अच्छी तरह आँखें खोलकर देखा, तो वहाँ राज-महल की जगह बहुत ही

मामूली मकान दिखाई दिया। उसने सोचा कि शायद वह कोई ख़्वाब देख रहा है। वह चिल्लाने लगा—"जाफ़र, मसरूर—अरे, कहाँ मर गये हो!"

उसका चिल्लाना सुन उसकी माँ भागी भागी आयी।

"क्यों बेटा! क्यों इस तरह चिल्ला रहे हो! कोई गन्दा सपना देखा है!"—उसकी माँ ने पूछा।

अबू ने अपनी माँ को बिना पहिचाने कहा—"तू कहाँ से चली आई!"

"अरे अबू अलि हसन! मैं तुम्हारी माँ नहीं हूँ क्या!"—माँ ने पूछा।

मैं ख़लीफ़ा हरून अल रशीद हूँ।"—अबू चिल्लाया।

बुढ़िया ने मुँह बन्द करते हुए कहा—"ज़ोर से मत चिल्ला, नहीं तो कोई सोचेगा कि तुझे भूत सवार हो गया है। तू कहाँ और ख़लीफ़ा कहाँ।"

"अरी बुढ़िया, तू कहती है कि मैं ख़लीफ़ा नहीं हूँ।" अबू माँ से कहने लगा—"किसी दुश्मन ने मेरा राज्य छीन कर मेरी यह हालत कर दी है। तू बताती है कि नहीं कि मेरे दुश्मन कौन हैं! नहीं तो तुझे अभी ख़तम किये देता हूँ।"

बुढ़िया ने कहा—"अरे हटाओ, ये बातें! बेटा मालूम है कल क्या हुआ! हमारे मोहल्ले के दण्ड-नायक को, राज सैनिक ले गये और उसे फांसी पर लटका दिया। ख़लीफ़ा ने मेरे लिये हज़ार सोने की दीनारें भी भिजवाई हैं। क्या देखोगे!" यह बात सुनते ही, अबू का पागलपन तो और भी बढ़ गया।

"अरी बुढ़िया! तू तो कहती थी कि मैं ख़लीफ़ा नहीं हूँ। मैंने ही दण्ड-नायक को सज़ा दी है। मैंने ही तेरे लिये हज़ार दीनारें भिजवाई थीं।" कहता कहता अबू अपनी माँ को पीटने लगा।

चित्र - कथा

एक दिन दास और वास ने अखबार में पढ़ा कि शहर में विचित्र वेष-धारण की एक प्रतियोगिता चलायी जायगी। दोनों वहाँ के लिए रवाना हुए। 'टाइगर' भी साथ था। दास और वास ने राम-लक्ष्मण का वेष धारण कर लोगों को मुग्ध कराया। इनकी देखादेखी जब 'टाइगर' भी एक गरीब भिखमंगे के वेष में वहाँ आया तो वहाँ उपस्थित लोगों को वह विचित्र वेष बहुत पसन्द आया और ईनाम उसी को दे दिया गया। बेचारे दास और वास देखते रह गये।

समाचार वगैरह

समाचार पत्रों से पता चला है कि भारत सरकार ने देश में, ग्रामोद्योग द्वारा उत्पादित वस्तुओं की विदेशों में माँग बढ़ाने के उद्देश्य से कुछ देशों में प्रदर्शन केन्द्र स्थापित करने का निश्चय किया है। उस प्रकार का प्रथम केन्द्र अमेरीका में खोला जायगा। कहा जाता है कि अमेरीका में बनारसी साड़ियों की अच्छी माँग है।

* * *

इधर कुछ समय पहले कर्ट हसेल्स नामक एक पन्द्रह वर्षीय जर्मन बालक ने हमारे प्रधान मंत्री श्री जवाहरलाल नेहरू को पत्र लिखकर भारत के कुछ सिक्के भेजने की प्रार्थना की थी। श्री नेहरू ने उस बालक को फौरन कुछ भारतीय सिक्के और कुछ सचित्र पोस्ट कार्ड भेज दिये। कर्ट बहुत प्रसन्न हुआ और श्री नेहरू जी को उसने धन्यवाद का पत्र भेजा।

* * *

भारत सरकार ने देहाती इलाकों में बड़ी संख्या में प्रसूति और शिशु कल्याण केन्द्र खोलने की एक योजना बनायी है। राज्य सरकारों को परामर्श दिया गया है कि गाँवों के दवाखानों को प्रसूति और शिशु-कल्याण केन्द्रों के रूप में विकसित किया जाय। इसके

लिए केन्द्र की तरफ़ से अधिक सहायता भी दी जायगी।

• • •

समाचार पत्रों में प्रकाशित एक वार्ता से ज्ञात होता है कि आगामी वर्ष बजट का हिन्दी अनुवाद किया जायगा। इसके अतिरिक्त वित्त विधान का भी हिन्दी में अनुवाद करने का प्रयत्न किया जायगा, यद्यपि टेक्नीकल शब्दों के मामले में अभी कुछ कठिनाई बनी हुई है।

• • •

सोवियत आज़रबाइजान की राजधानी बाकू से थोड़ी ही दूर पर एक प्राचीन इमारत है, जो कभी मंदिर था! यह मंदिर सत्रहवीं सदी में बना था और इसको बनानेवाले थे भारतीय सौदागर, जो भारत से रूस जाकर वाणिज्य-व्यापार किया करते थे। इस मंदिर की दीवारों पर पंजाबी और हिन्दी की लिपियाँ खुदी हुई थीं। आजकल रूस की सरकार की तरफ़ से यह स्मारक बड़ी सावधानी के साथ रखा जा रहा है।

• • •

भारत सरकार के शिक्षा मंत्रालय के लिए मक्तबा जामिआ लि., दिल्ली, ने 'ज्ञान सरोवर भाग-१' नामक एक अनमोल ग्रन्थ को प्रकाशित किया है, जिसमें विविध ज्ञानवर्धक बातों का विवरण दिया गया है। यह ग्रन्थ बालकों और कम शिक्षितों के लिए बहुत ही उपयोगी सिद्ध होगा।

• • •

सोवियत संघ में बच्चों और किशोर-वयस्कों के लिए वृहत् पैमाने पर खेल-कूद का विकास हो रहा है। आज लगभग ९० लाख किशोर वयस्क और बच्चे शरीर गठन के ७० हज़ार स्कूली मंडलों में संघटित हैं।

Printed by B. NAGI REDDI at the B. N. K. Press Ltd., Madras 20, and Published by him

Photo by B. Bhansali

पुरस्कृत
परिचयोक्ति

'जब से चमन छूटा है,
यह हाल हो गया है!'

प्रेषक :
श्री हंसराज आसर, बम्बई

रंगीन चित्र-कथा चित्र – २